श्रीसीताराम

ॐ नमो भगवते हनुमते श्रीरामदूताय।

श्रीमते रामानन्दाय नमः॥

भागवत गुटका

श्रीनामकीर्त्तन वा प्रथम प्रकरण,

सीतारामशरणभगवान्प्रसादलिखित;

लखनऊ

मुंशीनवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेख़ाने में छपा
सन् १९०९ ई०॥

श्रीजानकीवल्लभाय नमः

(रोलाछन्द) जय प्रेमा अनुरक्ति प्रदा, प्रद परा सुभक्ती। जय परमातमा ब्रह्म, जयति परतमा सुशक्ती ॥ १ ॥
जय प्रभु वेद प्रशंसनीय, जय श्रुतिप्रशंसनी। शिव मन मानस हंस, उमा मानस सुहंसनी ॥ २ ॥
जय संसेवित विष्णु, जयति जय रमा सेविता। जयति राम देवाधिदेव, सीताधि देवता ॥ ३ ॥
जय तारक तारिणी जीवभय हारिणि हर्त्ता। उतपति पालन प्रलय जगत कारिणि जय कर्त्ता ॥ ४ ॥
जय नित्या, जय सत्य, जयति आनन्द प्रमोदा। जय चिद्रूपा, चितस्वरूप दम्पती विनोदा ॥ ५ ॥
जय भगवति भगवान परस्पर प्राण प्रिया प्रिय। जयति किशोरी, जय किशोर, वपु नित्य दिव्य किय ॥ ६ ॥

जय मिथिलाधिपसुता, अयोध्याधिप सुत दम्पति। जयति सुनयना सुखविभूति, कौशल्या सम्पति॥ ७॥

जय जय जय श्री राम प्रिया, श्री सीता प्रिय जय। जय श्रीजानकि कान्त, राम कान्ता करुणामय॥ ८॥

जयति भरत सौमित्रि शत्रुहन हनुमत सेवित। चामर व्यजन सुछत्र आदि धरि छवि लखि लोभित॥ ९॥

जय जय श्रीरघुवीर वधू, जय सियवर सुन्दर। धरे कंज, शर, चाप, बसे हनुमत हिय मन्दिर॥ १०॥

नमो जीव सुख दयन नयन राजीव दयाला। असित नलिन नयना नमामि छवि वसित कृपाला॥ ११॥

नमो नमः श्री राम, नौमि सिय पद अरविन्दा। मुनि जन मन रसरङ्ग भृङ्ग सेवित सानन्दा॥ १२॥

(श्री रसरङ्गमणि)

नमो ब्राह्मणेभ्यः।

॥ श्रीअयोध्यामिथिलाभ्यान्नमः ॥

"राम नाम बिनु गिरा न सोहा।"

"रामनाम पाले पड़े तुलसीगोसाईं के" ॥

(चौपाई)

सब गुण रहित कुकविकृत बानी।
राम नाम यश अङ्कित जानी॥
सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही।
मधुकर सरिस सन्त गुणग्राही॥
(श्रीगो०)

श्रीसीतारामाभ्यान्नमः ॥



(कवित्त)

धारत जे पतित पुनीतता विरुद्ध नित्त
तेई प्रभु कृपा चित्त धारिहैं पै धारिहैं।
मारत हैं काल जाके बल महाबलिन को
तेई काम मलिन को मारिहैं पै मारिहैं॥
जारत जगत जाके जाप रुद्र रस राम
ताको तेज मेरे पाप जारिहैं पै जारिहैं।
तारत हैं जो सुनाय काशी ईश सोई मोहिं
तारक श्रीराम नाम तारिहैं पै तारिहैं॥ १॥

॥ श्रीअयोध्यामिथिलाभ्यान्नमः ॥

भागवत गुटके का यह पूर्वार्द्ध

वैष्णव सन्तमण्डल भूषण,

भक्ति योग वैराग विज्ञान भाजन, पण्डित

श्री ५ जानकीवरशरणजी

के कर कमल में

सादर सविनय सप्रेम समर्पण

किया

दीन सीतारामशरण भगवान्प्रसाद ॥

सन् १९०५ ई० ॥

॥ श्रीमतेरामानुजाय नमः ॥

इस गुटके के पूर्व्वार्द्ध में भगवन्नाम कीर्त्तन प्रकरण कुछ संक्षेप से है, और उत्तरार्द्ध में भागवत सुखद कई एक और और प्रकरण अतिसंक्षिप्त हैं; जिसके लेखक हमारे मित्रवर श्रीसीतारामशरण भगवान्प्रसादजी हैं॥ होनेहार सुहृद्वर्ग तथा नवीन विरक्त वैष्णवों का धन और भागवतमात्र की प्रसन्नता का कारण, तो यह है ही, परन्तु सब श्रद्धावन्त पाठकों विशेष करके अपने वैष्णव कायस्थ विद्यार्थियों के हितार्थ, इसको यह बालहितचिन्तक छपवाकर प्रकाश करता है। जिनके मध्य केवल ऐसे पुस्तकों का अभावहीमात्र नहीं बरन जिनकी फ़ारसी इंग्रेज़ी ही सर्वस्व होरही है, हरिहर कृपा से यह उनको प्रियहो॥

गिरिहिण्डा, मुङ्गेर | सनेहअभिलाषी
अक्षय नवमी १९५४ | शिवनारायणलाल

॥ वन्देवाणीविनायकौ ॥

॥ श्रीगिरिजादेव्यै नमः ॥

॥ श्रीअयोध्यामिथिलाभ्यान्नमः ॥

अथ भूमिका।

(दोहा) जय जय श्रीगुरुदेवजू जय सियराम
सुनाम। जय हनुमत, शिव, जपत
जे सादर "सीताराम" ॥ १ ॥
श्रीगुरु युगलअनन्य पद प्रेमपयोधि
सुजान। श्रीजानकीवरशरण जू
भक्ति विवेक निधान ॥ २ ॥
जन तिनको उपदेश लहि आज्ञा
आशिर्वाद। शीश नाय गायो मुदित
यह भगवानप्रसाद ॥ ३ ॥
शिवनारायणलालजू सुजन उदार
विनीत। छपवायो यह भागवत सुखद
सरल मम गीत ॥ ४ ॥
कहैं सुनैं सियराम यश जपैं सदा प्रभु
नाम। सानुकूल तिनपै रहैं शिव
हनुमत सियराम ॥ ५ ॥

श्रीअयोध्याजी, प्रमोदवन श्रावण १९५४।
दीन सीतारामशरण भगवान्प्रसाद

श्रीसीताराम

(श्लो०) ब्रह्मांभोधिसमुद्भवं, कलिमलप्रध्वंस
नं, चाव्ययं; श्रीमच्छम्भुमुखेन्दुसु
न्दरवरे संशोभितं सर्वदा । संसारा
मयभेषजं, शुभकरं, श्रीजानकीजीवनं;
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं
श्रीरामनामामृतम् ॥ (श्री गो०)

(दो०) श्री गुरु पद रज तिलक करि, वंदौं
सीताराम । संज्ञामात्र सुशब्द
सब, हैं जिनही के नाम ॥ (दीन)

(सवय्या) विधिरूप रचै रचना रुचि सो, हरि
रूप प्रजा प्रतिपालत है । रवि चन्द्र स्वरूप
प्रकाश करै, धरि रुद्र सरूप संहारत है ॥ सिय
राम विलास अनन्य भनै, मकरी जिमि जाल
पसारत है । नहिं दूसरो कारण कारज में, प्रभु
आपुहि आप विहारत है ॥

(वि० प०) जाके गति है हनुमान की ।

ताकी पयज पूजि आई यह रेखा कुलिश पषान की। अघटित घनन सुघट विघटन ऐसी विरदावली नहिं आनकी। सुमिरत संकट शोचविमोचनि मूरति मोदनिधान की। तापर सानुकूल गिरिजा हर लषन राम श्रीजानकी। तुलसी कपि की कृपा विलोकनि खानि सकल कल्यानकी॥

(चौ०) प्रणवौं चरण सरोरुह तिनके। सिय-
पियप्रिय, प्रिय सियपिय जिनके॥
सीय राम मय सब जग जानी। करौं
प्रणाम जोरि युग पानी॥ (श्री गो०)

(चौ०) वन्दौं रामनाम रघुवर को।
हेतु कृशानु भानु हिमकर को॥
महामन्त्र जोइ जपत महेशू।
काशी मुक्ति हेतु उपदेशू॥
सहसनाम समसुनि शिवबानी।
जपि जेई पिय संग भवानी॥
महिमा जासु जान गणराऊ।
प्रथम पूजियत नाम प्रभाऊ॥

श्रीसीताराम सीताराम रटनेवालों की जय ॥ विषयासक्त और प्रभु विस्मृति रूपी दीर्घ भयङ्कर महामोह के घोर नींद से, कारण-रहित करुणाकर भगवन्त और सन्त की सहायता पाय जो व्यक्ति जाग उठता है, सो स्वभावतः स्वयमेव प्रथम यही प्रश्न कर पड़ता है कि–"अशेष करके सर्व पातकों के समूह को स्वतन्त्रेण जला डालने और धोय बहाने का पूरा पूरा सामर्थ्य किस प्रायश्चित्त वा अमोघोपायान्तर में है ?

सो, सदाही से इसका उत्तर भी, वेद और साधु समाज का, एक मात्र, "हरिरिति हरिरिति रामेति रामेति" ही चलाआता है ॥ चाहिये कि मुमुक्षु स्मरण का दृढ़ नियम भर कर लेवे, फिर संचित पाप की है ही क्या बड़ी बात; उसका संहारमात्र क्यों, वरन कौनसा सद्गुण और सुलक्षण ऐसा रह जायगा जो श्रीनाम के प्रभाव से प्राप्त न हो ॥

प्रभुने अपने नाम में निस्सन्देह अद्भुत

प्रताप रक्खा है कहां तक कहा जावे । अजामिल, बाल्मीकि, प्रभृति का वृत्तान्त कौन नहीं जानता ॥

और युगों के पाप तो ऐसे अल्पतर कि मख इत्यादिक से भी भस्म कर धो बहाये जा सकें परन्तु, "नहिं कलि कर्म, न भक्ति, विवेकू। राम नाम अवलम्बन एकू ॥" कलि के पाप तो इतने घने तथा ऐसे महाघोर भयङ्कर हुआ करते हैं कि इनको जलाने की सामर्थ्य केवल श्रीनामही में है ॥

(चौ०) चहुं युग चहुं श्रुति नाम प्रभाऊ।
कलि विशेषि नहिं आन उपाऊ ॥

भगवत् के केशव माधव गोविन्द वासुदेव हरि नारायण इत्यादि अनन्त अनेक नामों में से किसी नाम के जापक की महिमा कही नहीं जा सकती ॥ जिसने नाम का अभ्यास किया, उसको फिर और धर्म रह ही क्या गया ? वह तो सब नियम कर चुका; सकल नेमों, उपायों का साररस (रे मन !) श्रीनामही को जान ॥

"रामनाम परं सारं" ख्यात ही है, और इस नाम की तो बातही निराली है (क०) मनहूं के परे परा बानीके पुरुष प्रभु, पावन पतित हित बैखरी बसेरे हैं; अगुण अरूप, गुण भूप, दुरगुणहर, हरके जीवन, जीव ज्याय घट घेरे हैं। शब्द में, सुरति में, श्वास में, सुलोचन में श्रवण समाने श्याम, रसराम, नेरे हैं; सीताराम वपु ब्रह्म अवपु अनाम धाम, अजपु सुजपु सीता राम मन्त्र मेरे हैं॥ (श्री ५ रसरंगमणि) भगवत् नामों के अतिरिक्त कलिमल मथन में, समस्त साधनों के रग ढीले होते हैं; किसी नेम अथवा अभ्यास के पांव नहीं जमते; तीर्थों के छक्के छूटते हैं; कोई उपाय रूपी भट उनके सामना करने को ठहरता ही नहीं; किसी व्रतसे वे निर्मूल नहीं होते; ध्यान ज्ञान वैराग्य दान यज्ञ और तप प्रभृति सब वीरों के दांत खट्टे होते हैं॥

बस, पाप ताप शाप की परम ओषधी जो है तो रामनाम ही है; साधनों का महासाधन

यदि कोई है तो केवल एक भगवत् के नाम ही हैं; श्रीनाम ही सकल कल्याणों के दिव्य निवास स्थानहैं; समस्त तीर्थादि पावनों को भी पवित्र करनेवाले हैं, परमधाम के यात्रियों के सम्बल अर्थात् पाथेय हैं, आर्तिहरण हैं, अधमोद्धारणहैं, परमोपाय हैं, चरम प्रयत्न हैं, साधन सिद्धरूप हैं, पतितपावनहैं, महामणिहैं, पारस हैं, सञ्जीवनी हैं, एकमात्र विश्राम धाम हैं, सर्व सज्जनों के जीवन हैं, सामान्य धर्म्मों के और विशेष धर्म्मों के कारण वा बीजहैं, नामी के मिलाने वाले हैं, महामन्त्र हैं, महादानी हैं, मन्त्रों के प्राण हैं निदान श्रीनाम का अकथनीय प्रताप और अमित प्रभाव है॥

जान के अथवा अनजान वा धोखे में ही चाहे जिस भांति नाम उच्चारण होजावे नाम लेनेवाले के पापों को जला के कल्याण करता ही है जैसे अमृत को कोई चाहे जान के पान करे अथवा बिन जानेही क्यों न पी लिया हो अमर होहीगा; यथा अग्नि में कोई वस्तु जान

बूझ कर डाली जावे अथवा यों पड़ गई हो जलती ही है; एवं लोहे में पारस जाने अथवा बिन जाने किसी भांति भी छू जावे, अवश्यमेव वह उसको स्वर्ण बनाही देता है; तथा क्षेत्र में सुबीज उलटा सीधा चाहे जिस प्रकार से पड़े पर उगता जमता तो सबही है॥

(चौ०) सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू।
लोक लाहु परलोक निबाहू॥ १॥
जपहिं नाम जन आरत भारी।
मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी॥ २॥
साधक नाम जपहिं लय लाये।
होहिं सिद्ध अणिमादिक पाये॥ ३॥
सुमिरि पवनसुत पावन नामू।
अपने वश करि राखेउ रामू॥ ४॥
शुक सनकादि सिद्ध मुनि योगी।
नाम प्रसाद ब्रह्म सुख भोगी॥ ५॥
नारद जानेउ नाम प्रतापू।
जगप्रियहरि, हरिहर प्रियआपू॥ ६॥
भाव कुभाव अनख आलसहूं।

नाम जपत मङ्गल दिशि दसहूं ॥ ७ ॥
उमा! राम मृदु चित करुणाकर।
"वैरभावमोहिंसुमिरतनिशिचर"॥ ८॥
देखा देखि, विवश, रोखे हू।
हँसी, वैर, दम्महु, धोखे हू ॥ ९ ॥
(दो०) चलत फिरत बैठत उठत, छन छन आठो याम। पियत खात प्रति कुछ करत, जन राघव "सियराम"॥
(श्री ५ राघवशरणजी, बढ़ैयाके)
(श्लोक) रामनामजपतां कुतो भयं सर्वताप शमनैकभेषजम्। पश्य, तात! मम गात्रसन्निधौ पावकोपि सलिलायते ऽधुना॥ (नृसिंहपुराणे)
येये प्रयोगास्तंत्रेषु तैस्तैर्यत् साध्यते फलम्। तत् सर्वं सिध्यति क्षिप्रं राम नामैव कीर्त्तनात्॥ (पद्मपुराणे)
अंशांशै रामनाम्नश्च त्रयः सिद्धा भवन्ति हि। बीजमोंकारःसोहञ्च सूत्र मुक्तमिति श्रुतिः॥ (महारामायणे)

(क०) सीताराम नामही में वेद संहिता पुराण; ज्ञान, ध्यान, भावना, समाधि, सरसतु हैं; सीताराम नामही में तत्त्व, भांति, योग, यज्ञ; पर, व्यूह, विभव स्वरूप परसतु हैं। सीताराम नामही में पांचो मुक्ति भुक्ति; वरदायक, विचित्र, एकरस दरसतु हैं; युगल अनन्य सीताराम नामहीमें मोद, विशद विनोद बारबार बरसतु हैं॥

(श्री ५ युगलानन्यशरण जी)

विचार कीजे, जब कि शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध का प्रबल विचित्र अधिकार सब को स्पष्ट और अतिशय प्रत्यक्ष है तो जिस किसी को भगवत् के नाम के गुण और अपार महिमा में प्रतीति न हो उस अविश्वासी को तो अवश्यमेव महाअभागीही जानना; नाम में अश्रद्धा अभाग की अवधि है॥

नाम और नामी अभेद कहे गये हैं बरन नामी से भी नाम की बड़ाई विलक्षण विशेष चमत्कृत है॥

(चौ०) "नाम निरूपण नाम यतन ते।

सोउ प्रकटत जिमि मोल रतन ते ॥
कहउँ कहां लगि नाम बड़ाई ।
राम न सकहिं नाम गुण गाई ॥"
(श्रीगो०)

वेद और पुराणों से नाम का अपार माहात्म्य तो प्रकटहै ही, और और अनेक सद्ग्रन्थों से नाना प्रमाणों को संग्रह करके "श्रीसीताराम-नामप्रतापप्रकाश" एक पोथी महात्मा श्री ६ युगलानन्यशरण जी महाराज की छप चुकी है जो भागवतमात्रकी जीवन प्राण है, और सब के देखने ही योग्य है, अवश्य देखना चाहिये। क्योंकि नाम की महिमा को समझ कर तथा विश्वास और श्रद्धापूर्वक नाम जपने के प्रभाव की उपमा कुछ ऐसी है जैसी मणि परखनेवाले की; पुनः ऐसे कि जैसे अपूर्व शस्त्रका ऐसे योग्य व्यक्ति के हाथ से प्रयोग कि जो महाबली हो तथा शस्त्रविद्या में अतिनिपुण और कुशल हो, यों तो काट करने को अच्छा लोहा निस्सन्देह काट करहीगा वह यद्यपि अ-

नारी अबल बालक के ही हाथमें क्यों न हो ॥

☞ नाम के निरूपण और नाम यत्नकी महिमा जैसी सर्वोपरि है तैसाही नाम का अभ्यास सुगम सुलभ तर और सबसे सहज भी पहले सिरे काही है। यह बात सबको विदित और स्पष्टहै ॥

तस्मात् श्रीराम नाम के अभ्यास को सब साधनों कर्मों धर्मों इत्यादिक की चोटी वा शिरोमणि और उत्तमोत्तम से परमोत्तम जानना चाहिये ॥

यदि लूट सकै तो इसी वर्त्तमान ही दिन मुहूर्त्त पल श्वासमें श्री राम नाम लूटना बटोरना (रे मन!) तुझको उचित और अति अवश्य है। "आज कि काल चले उठि, रे मन! तेरे हि देखत केते गये हैं। सुन्दर! क्यों नहिं राम संभारत? या जग में कहु कौन रहे हैं"॥

(दो॰) राम नाम की लूट है, लूट सकै तो लूट। तुलसी, फिरि पछताइ है,

जब तनु जैहै छूट ॥ (श्रीगो०)

भगवत् को भूले हुओं में प्रायः प्रति सैकड़े निन्यानबे तो वेही निकलते हैं जो मृत्यु को भूल कर अपने को अमर समझे बैठे हैं ॥ मनुष्य कहै "दिन जात है," दिवस कहै "नर जात"॥

भूत काल के आह ! इतने दिन जो हरि स्मरण बिन व्यर्थ बीते सो सबके सब जाचुके व्यतीत होचुके; वे दिन अब किसी युक्ति प्रयत्न वा पश्चात्ताप से चाहे द्रव्य रत्न धन व्यय अथवा मोल से बहुरि आने वाले नहीं; वह समय पुनः कदापि किसी प्रकार से मिलने का नहीं (शे०) गया काल फिर हाथ आता नहीं। किसी मोल से कोई पाता नहीं ॥ (बु० ला०)

भविष्य का भरोसा तो दुराशा, भूल तथा बड़ी ही हँसी की बात है; भला निश्चय कौन कह सक्ता है कि सहसा कैसा काल आवेगा वा क्या होगा ? रे मन ! क्या महाकराल काल तेरे शीश पर निःसंशय नहीं नाच रहा है ? क्या यह पंचभूतरचित शरीर यथार्थ में क्षणभं-

गुर नहीं है ? क्या मृत्यु का आना सब के देखते २ अकस्मात् नहीं हुवा करता है? क्या भयानक अन्तिम रोग बात की बातमें अचानक नहीं आपहुँचता है? (क०) करत करत धन्ध कछुवो न जानै अन्ध, आवत निकट दिन अगिलो चपाकि दै; जैसे बाज तीतरको दाबत अचानक में, जैसे बक मछरी को लीलत लपाकि दै। जैसे घात माखिन पै मकरी करति आइ, जैसे सांप मूषक को ग्रसत गपाकि दै; चेत रे अचेत मन! सुन्दर, संभारि "राम" ऐसे तोहि काल आइ लेइगो टपाकि दै ॥ रे मन! देख तन तरकस से श्वासशर बराबर निकले जाते हैं। क्या कोई व्यक्ति कठिन कालसे भी ऐसा कहसक्ता है कि "ठहरो अभी मुझे सुभीता सावकाश नहीं है?" कोई कदापि नहीं कहसक्ता॥

(दो०) श्वासहु भर या जियब की, करै प्रतीति
न कोइ। ना जानौं फिर श्वास को,
आवन होय न होय॥ (श्री हं० क०)

(सो०) परिजन माई बापु, देखे, देखत नित मरत। अमर मोह वश आपु, याते अचरज कवन बड़ (श्रीहंसकला जी)

तस्मात्, (रे मन!) सुन रख कि तेरा यह कहना कि "माला को दूसरी घड़ी सही" अथवा "कल जप लूंगा" यह तेरी भारी मूर्खता, भयानक मोह, बड़ाही अज्ञान, अविवेक और चूक है। जन्म मृत्यु जांचने वाले बताते हैं कि प्रतिदण्ड के मध्य १४४० मनुष्य मरते हैं। रे मन! विलम्ब का लेश भी अत्यन्त अनुचित तथा अयोग्य है॥ कहे देता हूं कल परसों पर टालटूल के फेर में मत पड़, ठगा न जा, धोखा न खा॥ श्रीसीताराम कृपा से नाम रटने में चटपट प्रस्तुत और प्रवृत्त होजा॥ (क०) कालिही तरुन तन, कालिही धरनि धन, कालिही जितोंगो रन, कहत कुचालि है; कालिही साधोंगो काज, कालिही समाज राज, मो सों कोऊ कहा भारे मही मेरु हालि है। तुलसी, यही कुभांति घने घर

घालिआए! घने घर घालत है!! घने घर घालि है!!! देखत सुनत समुझतहु न सूझै सोइ, कबहुँ कह्यो न "कालि हू को काल कालि है" ॥

(श्रीगोस्वामी जू)

निरन्तर श्रीसीतारामनामकी माला फेरनेवालों में प्रति शत ७० (सत्तर) तो वे ठहरते हैं जो, प्रत्येक निमिषमें काल की मानों प्रतीक्षा सी करते हुए, जीतेजी ही इस अधम शरीर को त्यागे बैठे हैं, मृत्यु की विस्मृति कैसी और क्षणभंगुर देह को अमर मानना कहां का॥ रे मन! दुर्लभ नरशरीरके आयुष् भरमें दुर्लभतम भगवत स्मरण कर ले॥ भविष्य का भरोसा ही क्या? तात्पर्य यह कि इस वर्त्तमान ही समय को" श्रीनाम के कीर्त्तन मनन चिन्तन सुरति सुधि सुमिरन रटन इत्यादिक काम में लाना चातुर्य्य तथा परमपुरुषार्थ है, और यही अपना प्रमुख कर्तव्य है॥ मृत्यु के विषय में और विशेष कहने की अब कुछ आवश्यकता नहीं, प्रयोजन केवल इतने ही भर से है कि—

(दो०) करना है सो "आज" कर, आजहु में
बरु " अन्त " । पल में परलय होतु
है! बहुरि करैगो कन्त ?
लव, निमेष, परमाणु, युग, वर्ष,
कल्प शर चण्ड । भजसि न, मन तेहि
राम कहँ, काल जासु को दण्ड ॥ २ ॥

चौरासी लाख तरङ्गों से लहराता हुआ यह भवसागर, तथा अगणित भयङ्कर जाल फन्देवाला यह कलियुग !!! बस इस देश काल को अच्छे प्रकार से विचार करके, (रे मन !) ऐसी अतिशय कठिन दुरवस्था में निश्चिन्त वा अचेत मत रहु;

बरु इस प्रमाण को दृढ़ गहके श्रीसीता राम नाम का शरण ले कि—

(चौ०) यद्यपि प्रभु के नाम अनेका ।
श्रुति कह अधिक एकते एका ॥
राम सकल नामन ते अधिका ।
होउ नाथ अघ खग गण बधिका ॥

१ (दो०) राकारजनी भक्ति तव, राम नाम

सोइ सोम। अपर नाम उडुगण
विमल, बसहु भक्त उर व्योम॥

२ (क०) इष्ट मेरे राम सन्त शिष्ट मेरे राम औ अनिष्टहर राम, दानी मिष्ट निज काम हैं; नैन मेरे राम सुख सैन मेरे राम लैन दैन मेरे राम बोल बैन चैन धाम हैं। मर्म मेरे राम शुभकर्म मेरे राम परधर्म मेरे राम रसरङ्ग मणिदाम हैं; वेद मेरे राम तत्त्व भेद मेरे राम औ अभेद सीताराम सरबस राम नाम हैं॥

३ (क०) राम नाम प्रणव को कारण, उच्चारण ते तारण करण भव उदधि अगम हैं। रेफ औ अकार त्यौं मकार विधि हरि हर, त्रिगुण के हेतु, आप अगुण परम हैं॥ बीज वह्नि भानु शशि, मन मल मोह तम नासिकै प्रकाशै सुख शीत अनुपम हैं। शिवा को सुनायो शिव महामन्त्र, रसराक, राम नाम हरि के सहस्र नाम सम हैं॥

(श्री ५ रसरंगमणि)

४ (चौ०) तीरथ अमित कोटि शत पावन।

नाम अखिल अघ पुंज नशावन ॥
५ जासु नाम जपि सुनहु भवानी।
भव बन्धन काटहिं नर ज्ञानी ॥
६ (दो०) यह कलिकाल मलायतन, मन!
करि देखु विचार। श्रीरघुनाथ
नाम तजि, नाहिन आन अधार ॥
७ रामनाम नर केसरी, कनक कशिपु
कलिकाल। जापक जन प्रह्लाद
जिमि, पालहिं दलि सुरसाल ॥
८ (श्लो०) सप्तकोटिमहामन्त्राश्चित्तविभ्रांति
कारकाः। एकएवपरोमन्त्रो "राम"
इत्यक्षरद्वयम् ॥

इस तन को इस कारण से (रे मन!) मत प्यार कर कि विषय भोग और और शरीरों में इस से बढ़ के प्राप्त नहीं होंगे बरन इस हेतु से और इस बुद्धिसे इस अनमोल कायाको अत्यन्त आदरणीय समझ कि प्राणनाथ का मनन

सुमिरन इसी देहमें होसक्ता है, और किसी दूसरे में सम्भव नहीं॥

(दो०) कूकर सूकर करत हैं, खान पान रस भोग। तुलसी व्यर्थ न खोइये, यह तन भजिबे योग॥

जब तक इस संसार हाट में (रे मन!) तेरे हाथ अरोग मनुष्यायु रूपी खरा धन है, इसी बीच में तू हरिस्मरणरूपी पदार्थ को ले कृतकृत्य हो; क्योंकि निर्धन कोई वस्तु मोल लेने का सामर्थ्य नहीं रखता॥ एक एक कौड़ी का आदर दरिद्रता आए पर तथा श्वासा का मोल अन्तकाल मेंही जान पड़ता है॥

(दो०) सम्पति सारे जगत की श्वासा सम नहिं होय। सो श्वासा, तजि राम पद तुलसी अनत न खोय॥

भली भांति विचारने से खुलता है कि मनोरथ मात्र जहां तक हैं वे सबके सब दोही इच्छा-

ओं की शाखा और प्रशाखा हैं; (१) एक तो दुःख वा अप्रिय घटना से बचने की; (२) दूसरी, सुख वा प्रिय वस्तु की प्राप्ति की॥

पुनः, भगवत् की आज्ञा, जो श्रीगुरु तथा वेद और सन्तों के द्वारा पहुँचती हैं, इनको भी विवेक और विचारपूर्वक विवेचना करने से यह स्पष्ट पाया जाता है कि ये सब दो श्रेणियों में विभक्त होसक्ती हैं; (१) एक तो यह चेताती हैं कि अमुक अमुक अयुक्त कामोंसे बचो उन्हें मत करो, (२) दूसरी यह बताती हैं कि ये ये कर्तव्य हैं इन युक्त कर्मों में प्रवृत्त हो। पूर्व का नाम "निषेध" है और उत्तरकी संज्ञा "विधि" है॥

"निषेध" को नहीं त्यागना तथा "परमेश्वर को भूलना" येही दोनों अधर्म वा "पाप" के नाम से पुकारे जाते हैं। "निषेधों से विराग" तथा "विधियों के अनुकूल अनुवर्त्तन करना" इसी को "पुण्य" कहते हैं, और "प्राणनाथ के पदपङ्कज में सुरति और मनका अनन्य और अविचल अनुराग" यही हमारा परम "धर्म" है

निःसन्देह यह वार्त्ता तो है ही कि समस्त दुःख, विषाद, कुसंग, कुमति, दम्भ, अश्रद्धा, काम, क्रोध प्रभृति के झकोरे आलस्य, त्रयताप, दुर्गति और सारी अप्रिय दुर्घटनाओं की जड़ वरु बीज "पाप" है; तथा सकल सुख, प्रहर्ष, सुमति, ज्ञान, विरति, भक्ति, सुगति, सदाचरण और सुसंगादि सर्व सुसंघटों का मूल प्रभुअनुरागरूप अपना परम "धर्म" है॥ विधि किंवा निषेध, वस्तुतः हमारेही भलेके निमित्त हैं; अर्थात् दुर्घटना वा अप्रिय से अभिरक्षा, तथा प्रिय सङ्घट वा सत्यसुख की प्राप्ति, के हेतु हैं; अथवा संक्षिप्तही क्यों न कहिये, कि परमात्मा की जहांतक आज्ञा मात्र हैं सो सब केवल हमारेही मनोरथों की सिद्धिके अर्थ हैं, उनका कुछ और दूसरा अभिप्राय नहीं। ऐसे दीनदयालु अधमोद्धारण प्रणतहितकारी सच्चिदानन्द व्यापक अज एक अविकारी परात्पर अघारी असुरारी सुखमासीव सारङ्गधारी श्रीकौशल्यानन्दन शिवमनमानसहंस राजीवनयन प्रमोद-

वनविहारी चराचरस्वामी शरणागतवत्सल भक्त-भयहारी सुखसिन्धु श्रीजानकीजीवन की कृपा की जय ॥

(चौ०) अस सुभाव कहुं सुनौं न देखौं।
केहि खगेश रघुपति सम लेखौं ॥ १ ॥
सुमुख सुलोचन सरल सुभाऊ।
शील सकोच सिन्धु रघुराऊ॥ २ ॥
जानतहूं अस स्वामि "बिसारी"।
फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी ॥ ३ ॥
हानिकि जग यहिसम कछुभाई।
भजिय न रामहिं नर तन पाई ॥ ४ ॥

हां, जिस एक ही प्रयत्न से, यावत् अभीष्ट मात्र हैं सो सब के सब एक साथ बिनु प्रयास अवश्यमेव पूरे होवें [भूतकाल के " मूल " अधर्म और पापसमूहों का सम्यक् प्रकारेण विनाश; भविष्य पापों से तथा भवरोगादि भय दम्भ कामादिक के चपेट और दुःखों से परिरक्षा; उत्तम सुखों और पुण्यों का योग क्षेम; स्वार्थ परमार्थ; स्वधर्म में पूरी प्रवृत्ति; व्यवसायात्मिका

बुद्धि; निर्मल प्रेम; अथवा अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष;] कोई दुष्प्राप्य न रह जावे; सो ऐसा सर्व दुखहारी, सम्पूर्ण सुखकारी, कुमतिहर्त्ता, सुमति भर्त्ता, सहज, निर्विघ्न, स्वतन्त्र, अमोघ उपाय वर तो केवल एक " श्रीनाम का आश्रय लेना ही " है, निश्चय " श्रीनाम ही का अवलम्ब " है ॥ और शम, दम, यज्ञ, दान, तीर्थ, व्रत इत्यादि सब सामान्य धर्म हैं ॥

तस्मात् इस में किसी ज्ञानी भाग्यशाली को कदापि कुछ भ्रम वा संशय नहीं होसकता कि सकल उत्कृष्ट धर्मों का शिरोमणि " हरि स्मरण " ही है ॥

(पं०) " लाखन में एक बात " तुलसी बताये
जात, जन्म फल चाहिये तो " राम
नाम लीजिये " ॥

(दो०) दान, तीर्थ, आचार, व्रत, योग, यज्ञ,
विज्ञान । रामचरण ! साधन सकल,
"नाम" अधीन प्रमान ॥

अब मुख्यतः "भागवत धर्म," जो (१) नाम (२) धाम (३) रूप (४) लीला इन चारों की परस्पर अभेद उपासना, सो तिन में भी देखिये कि विशेषतः नामही प्रमुख है*नाम तीनों से चढ़ा बढ़ा है॥

१ (चौ०) सुमिरत सादर शमन कलेशा।
सबहि सुलभ सब दिन "सब देशा।"॥
२ (चौ०) देखिय "रूप" नाम आधीना।
रूप ज्ञान नहिं नाम विहीना॥
३ (दो०) ब्रह्म राम ते "नामु" बड़, वरदायक वरदानि। राम "चरित" शत कोटि महँ, लिय महेश जिय जानि (श्री ६ गोस्वामीजी)

और आगे बढ़के भी देखा जाय तो-
(दो०) भवसरि बेरो नाम तव, "साधन फल, श्रुतिसार"। प्रभु! योगी, ज्ञानी, विरत, "जीवन मुक्त" अधार॥ १॥

* नाम की सर्वोत्कृष्टता प्रकट देख लीजे॥

(दो०) सकल कामना हीन जे, राम भक्ति रस
लीन। नाम प्रेम पीयूष ह्रद तिनहुं
किये मन मीन॥ २॥
तुलसी के मत चातकहि, केवल प्रेम
पियास। पियत "स्वाति" जल जान
जग, जांचत "बारहु मास"॥ ३॥
बरषा ऋतु रघुपति भगति, तुलसी
सालि सुदास। राम नाम वर वरण
युग श्रावण भादो मास॥ ४॥
(श्री ६ गोस्वामी जी)

☞ सारांश यह कि "भगवन्नाम का सप्रेम स्मरण" केवल साधनही मात्र नहीं है, किन्तु सिद्ध स्वरूप भी यही है; [सारे संसार की, सकल विषय की, तथा अहमिति पर्यन्त की, विस्मृति; और केवल एक प्रेमप्रिय प्रभु ही की सुरति स्मृति का रह जाना;] श्रुति स्मृतियों का सिद्धान्त बस इतनाही है "सुमिरन, भजन, परम धर्म योग, वैराग्य, ज्ञान, उपासना," चाहे जिस नाम से

इसको पुकारिये, परादशा एकही है यही है, एकही है यही है ॥

रे मन ! श्री सीताराम नाम रटने में किञ्चित् आसक्त वा ढीलढाल मत कर । आलस्य और परिश्रम इन दोनों के हानि लाभ को विचार के देख । प्रभु स्मरण में " आलस्य " बस यही प्रायः हमारे सकल दुर्भाग्य दरिद्र दुर्दशा तथा दुःखों की जड़ और विशेष कारण हैं; अतएव इस महा शत्रु आलस्य को अपने पास भटकने न दे, सदैव उसको फटकारे रहा कर ॥ यह भी कहे देता हूं कि " सुमिरन में आसक्त " " विपति का कारण " ही क्यों बरु वस्तुतः बिसारनाही साक्षात् आपत्ति और स्वयं विपत्ति है, उस से बढ़ के कोई और सर्वनाश क्या होगा ?

(चौ०) कह हनुमन्त विपति प्रभु सोई ।
जब तव सुमिरन भजन न होई ॥

सुख सोके अथवा ठसढे ठसढे चलके किसी

महा मनोरथ तक कौन पहुंचा है? विना क्लेश कष्ट के किसने लाभ उठाया है? यों न कोई ज्ञानी हुआ, न धर्म कर्म साध सका, और न अलभ्य पराभक्ति पाई॥ संस्कार नाम श्री सीताराम कृपा और सन्तों के संग तथा अनुग्रह से श्री नाम के अभ्यास पर ही टूट कर पड़ने से स्वार्थ परमार्थ सकल पदार्थ पाने वालों ने पाये हैं। साधन सिद्ध स्वरूप श्री नाम में परिश्रम करने का फल प्रभाव तेज बल महिमा, श्री विश्वामित्र श्रीवाल्मीकि श्रीध्रुव प्रभृति के जीवनचरित से विदित है। तथा "तप बल धरणि धरहिं सहसानन," इत्यादि प्रसिद्ध और विख्यात ही है॥

जो सार को पाया चाहता है सो उसको असार से अमनिया करने के क्लेश से डरता भागता नहीं; तथा जो फल खाया चाहता है, वह वृक्ष में जल सींचने के परिश्रम और घास दूर करने के कष्टसे जी नहीं चुराताहै॥ (रे मन!) इसपर ध्यानदे, "ख" अक्षर से पूर्वस्थ "क" वर्ण,

प्रथमतः, उच्चस्वर से, यह पुकारता है कि पहले "कर (यतन)," पीछे "खा (व्यञ्जन)" तथा "प,फ" अर्थात् "पहले परिश्रम, फिर फल"॥ यथार्थ में श्री नामानुरागरञ्जित काष्ठा वा परिश्रमका फल वा प्रताप विलक्षण है प्रकट है धन्य है॥

(दो०) राम नाम हल्दी गिरह, रगड़ेही सर
साय। धर्म्मदास, रगड़े बिना, ज्योंकी
त्यों रह जाय॥

नाम का अभ्यास ज्यों ज्यों जहां तक अधिक होता जायगा त्यों त्यों उसका अधिक से से अधिकतर चमत्कार स्वतः अनुभव होता जायगा॥

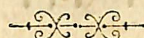
निदान, सुखनामा दुःखशय्यासे (रे मन!) शीघ्र उठ, आलस छोड़ कटिबद्धहो, "श्रीसीता राम सीताराम" रटनके रगड़ में मनक्रम वचन से लगके कृतार्थ हो क्योंकि यही तेरा परमधर्म, स्वार्थ, सब कुछ है॥ नामापराध प्रभृति से निवृत्ति और सुमिरन में प्रवृत्ति की प्रार्थना प्रभु से

किये जा, और सुमिरे जा, जपे जा; माला फेरे जा, येनकेनप्रकारेण नाम रटे जा॥

(शेर) था भी यही, है भी यही, अन्तौ इसीसे
काम है। श्रीराम जप, श्रीराम जप,
श्रीराम तारक नाम है॥

चरनों का चित में ध्यान धरि, तजि आस
रे मन! आनकी। जपु सत्य पितु श्रीराम
प्रभु, जपु अम्ब सीता जानकी॥

(अम्बासहाय)



श्रीप्रियतम प्रभुके बिसारे रहनेवालों को तो लम्बे आयुर्दाय और दीर्घ जीवन से भी क्या हाथ लगने का है? परन्तु जो श्रीकृपा से अब भी श्रीनाम की सुधि करें और सबसे सचसच टूटकर उस पर पड़ें, तो हां ऐसे भाग्यशाली के लिये आयुर्बल के रहे बचे इतने ही से दिन भी कुछ थोड़े नहीं हैं। क्योंकि धन से ही

कोई धनी नहीं हो सक्ता है, बरु व्यापार की स्थिति और व्यय की युक्ति वाले (यद्यपि विशेष पूंजी न हो तथापि) श्रीरामकृपा से थोड़ेही काल में महाधनाढ्य होजाते हैं तस्मात् थोड़े आयु में (रे मन!) बहुत भारी काम करले ॥

लोग जिस भांति कौड़ी कौड़ी जोड़ के लाख और करोड़ करते हैं, तू भी (रे मन) सदैव सुधि रख कर, अपने इस अनमोल अल्प समय में से यत्न और सावधानतापूर्वक बचाय बचाय के घड़ी घड़ी दण्ड दण्ड क्षण क्षण निमिष निमिष श्वास श्वास में श्रीसीताराम की सुरति और स्मरण को धन रंक लोभी और पति बिरहिनि इत्यादि सरिस सघट पनिहारिनि की नाईं संभालता रहाकर ॥ (वि० प०) सुन मन! सदा रंक के धन ज्यों,

छन छन प्रभुहि संभारु ॥ (श्री गो०)

उचित कर्तव्य हम को यही है कि जन्म भर नाम सादर जपा करें, और यों केवल भवसिन्धु से पार लगने भर के अर्थ तो श्रद्धा विश्वास से श्रीसीताराम नाम की बस एकही आवृत्ति में पूर्ण ॥

१ (चौ०) राम राम कहि जे जमुहाहीं।
तिनहिं न पाप पुञ्ज समुहाहीं ॥

२ (दो०) तुलसी अघ सब दूर भे, "रा"
अक्षर के लेत। आवै सो नहिं
बहुरि जेहि, "म" अक्षर पट देत ॥

३ (चौ०) बारेक राम कहत जग जेऊ।
होत तरण तारण नर तेऊ ॥
(श्री ६ गो०)

दृढ़तर नियमपूर्व्वक माला का फेरना मोह और विस्मृति को अमोघ कोड़ा होता है ऐसा प्रायः कहा गया है।

अर्थात् नियम और माला इन दोनों को बड़ा भारी अधिकार है॥

साढ़े तीन करोड़ नाम जपने की आज्ञा को तो प्रायः सब ने सुना है कि अधिक नहीं तो इतना तो अवश्यही पूरा कर देनाही चाहिये। * रोम प्रति एक बार नाम लेना थोड़े से थोड़ी संख्या है॥ आठ पहर में कम से कम तौ भी प्रति दिन सवा पहर नाम के जाप में अवश्यही लगाना चाहिये; थोड़े से थोड़ा तब भी

* साढ़े तीन करोड़ "राम" नाम एक वर्ष में पूरे करनेके अभिप्रायसे (३५००००००÷३६०=९७२२२) सत्तानवे सहस्र तीन सौ प्रतिदिन के होते हैं जिस में पुनः और "इक्कीस सहस्र छः सौ" जोड़ने से(९७२२२+२१६००=११८८२२) एक लाख अठारह सहस्र नौ सौ नाम वा प्रायः बारह सौ माला प्रत्येक दिन पड़ते हैं; अतएव १२०० (बारह सौ) माला प्रतिदिन सब देश काल में सादर फेरने का नियम अति ही अवश्य है, अल्पहु से अल्प इतने में कुत्रापि कदापि किञ्चित् त्रुटि न

प्रति श्वासा एकबार राम नाम उच्चारण करना उचित है, इक्कीस सहस्र छः सौ (२१६००) श्रीनाम की संख्या प्रतिदिन अवश्यमेव पूरी कर देनी, साधारण बात है॥

होने पावे॥ और यदि नौ नौ "राम" नाम के स्थाने एक एक "सीताराम" नाम रखलें, तो (११८८२२ ÷ ९ = १३२०२) लगभग सवा तेरह सहस्र के ही प्रति दिवस की संख्या होती है, अर्थात् भगवत् और भागवतों की कृपा से "सीताराम" नाम की १३२ (एक सौ बत्तीस) माला वा सवा तेरह सहस्र प्रतिदिन सादर नियम करके जप लेना युक्त है; और जो इससे अधिक अथवा और विशेष बन पड़े, श्रीरामकृपा से, तो फिर इसकी क्या बातहै॥ परन्तु यदि कदाचित् किसीको विष्णु के किसी नामसे ९००० नौ सहस्र गुण अथवा सहस्र नाम से तथा राम नाम से ९ (नव) गुण बढ़ के सीताराम नाम के होने में प्रमाण के विना दृढ़ प्रतीति न हो, तो वह "राम" नाम ही की १२०० (एक हजार दो सौ) माला वा ११८९०० (एकलाख अठारह सहस्र नौ सौ) प्रतिदिन पूरे कर लेनेकी आवश्यकता समझलें। थोड़ेसे थोड़ा सवा पहर नहीं तो, जहां तक अधिक श्रद्धा हो

अपने इस अलभ्य काल का अनादर न कर (रे मन!) और इस को व्यर्थ न खो। झुककै देख कि प्रतिदिन रात में से किसी पहर पांच घड़ी अथवा तीन चार घण्टे के स्वाभाविकाभ्यास और सामान्य नियम से, कि जिस में विना प्रयास और विन भारी क्लेश के ही "सीताराम" नाम की ५०० पाँचसौ मालायें फेरी जासक्ती हैं, जन्म जन्मान्तरों के पापों से तथा भव बेगारी से छूट कर सब सुख सर्व मनोरथ सकल कल्याण और दिव्य मङ्गल को निस्सन्देह पाने का सुलभतर उद्योग पूरा पूरा हो चुकता है॥

युक्ततर है; और जिनका आठौ पहर यही जलमीनवत् जीवन ही है, उनकी तो वार्त्ता ही न्यारी है; उनका समय धन्य, उनका संस्कार धन्य, उनका संग धन्य, उनका अभ्यास धन्य, उनपर प्रभु की कृपा धन्य और उनकी महिमा समझनेवाला प्राणी धन्य॥ लिखा है कि नरतनु में साढ़े तीन करोड़ रोम हैं; और यह कि प्रतिदिन रात में इक्कीस सहस्र छःसौ श्वासे चलते हैं॥

चित्त में बैठाय रखने की बात है, इस में कुछ सन्देह नहीं, कि जिस स्थान में प्रभु का सुमिरन और नाम कीर्तन भक्तिसहित होता है, वहां आप अवश्य होते हैं। श्रीमुखवचन है कि (श्लोक) नाहं वसामि वैकुण्ठे, योगिनां हृदये ऽपि वा। मद्भक्ता यत्र गायन्ति, तत्र तिष्ठामि, नारद॥ तथा॥ प्रेम सहित जहँ लीजै नाम।

दादू कहै तहां ही राम॥

नाम का माहात्म्य यदि लिखने बैठें तो अनेक अतिविस्तृत पोथियां केवल इसी की होजावें, तब भी पार न पावें, इस गुटके में अटना समाना तो असम्भव ही है॥ किसी ग्रन्थ से भगवन्नाम के माहात्म्य* को पढ़ना सुनना अत्यन्त अवश्य है॥ विवाद, अपवाद, अनुचित बतकही, आयु घटानेहार व्यर्थ संभाषण अथवा अनावश्यकीय

* यह किस सद्ग्रन्थ में नहीं भरा पड़ा है, "हरिः सर्वत्र गीयते" प्रसिद्धही है॥

वार्ता में जो समय कटता है, उस काल को भी यदि श्रीनाम के रटने में लगावे (रे मन!) तो कैसी उत्तम बात है॥

(दो०) तुलसी रसना तौ भली, जो तू सु-
मिरै राम। नातौ काटि निकारिहौं
मुख में भलो न चाम॥ (श्री ६ गो०)

(शेर) कैसे हैं उस के जी को प्रिय श्रीराम?
जिस की जिह्वा ही पर नहीं यह नाम
(लाला बुलाकीलाल)

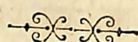
इस बात पर चाहे जिस किसी को हँसी आपड़े तथापि कहे बिन न रहूंगा कि प्रसाद पाने के सम्पूर्ण समय कौर कौर पर बराबर प्रभु के नाम लेते जाने का गुण अद्भुत है; तथा इतना और भी कहूंगा कि "हाथ कंगन को आरसी क्या" जिन भाग्यभाजन का जी चाहे श्रीसीताराम कृपा से भोजन के समय "चुपचाप प्रभु नाम ही की सुरति अविरल रखने" के नेम को करके देख लेवें कि

कैसा विलक्षण प्रभाव इस में है। भोजन पाने के अवसर जिस विषय का मनन होता रहेगा, वही प्रायः चित्त पर चढ़ा रहा करेगा सिद्धान्त है ॥ विशेषतः तुझे तो (रे मन !) निःसन्देह इस सावधानता और साधन की बड़ी ही भारी आवश्यकता है ॥

नाना विधियों वा अनेक व्यवहारों का, अथवा आचार विचार के झमेलों का किंवा आसन अशन बसन का, चाहे, देशकाल पात्रापात्र का वा वर्णाश्रमादि विविध भेदों का, कोई रोक टोक बाधा इस उत्तमोत्तम अभ्यास में नहीं है, भगवन्नाम के तो प्राणी मात्र सब ही अधिकारी हैं; इस से सुगमतर कुछ भी नहीं है, सब कुछ से सुलभतम श्रीनाम ही का अभ्यास है ॥ न इस में कोई बखेड़ा न कोई खटक, न कोई झंझट रगड़ा न कोई अटक, न यहां विघ्न वा दोष का पता न

भय को ठाम, न ऊधम उद्वेग की पहुँच न संशय का नाम; अतिशय निर्द्वन्द, जपत मन आनन्द ॥

क्या अशुद्धियों के काल में प्रभु नाम की विस्मृति अनुचित, अयोग्य, और भयानक नहीं है ?



इन दोनों वाक्यों को भी सदैव साथ ही साथ मनस्थ रखना युक्त और उत्तम है (१) "सेवत लषण सीय रघुवीरहिं। जिमि अविवेकी पुरुष शरीरहिं" और (२) "तजौं न तनु निज इच्छा मरना। तनु बिनु वेद भजन नहिं बरना" ॥ उभय वचनों में परस्पर विरोध नहीं मानना; अवसर तथा देशकालानुसार अन्वेषण और विचार सहित दोनों के तात्पर्य्य में विवेक चाहिये ॥ भोजन, भजनार्थ जीने के हेतु योग्य है युक्त है, परन्तु कुछ भजन ही भोजन के निमित्त नहीं किया जाता

और न जीना ही भोजन वा भोगादिक के अर्थ होना है; पात्र के लिये घृत नहीं, वरन घृत ही प्रयोजन पात्र का प्रसिद्ध है ॥

पुनः, लोकोक्ति भी है कि "ना अति बरषा, ना अति धूप; ना अति बकता, ना अति चूप" । "अति सर्व्वत्र वर्जयेत्" ॥ अर्थात् अतिशय कठिन बैठकी वा रोग-जनक कष्ट ही से सुमिरन का काम चले तो चले, ऐसा नहीं है; किन्तु (रे मन!) मितभोगी होना; न तो पेट के निपट पोषक और विषयासक्त ही बन रहना कि जो वास्तव में सर्व्वथा निन्दनीय और भारी अकाज का कारण है ही; और न यहां तक अनादर भी देह का करना वा इस की सुधि तक बिसार बैठना कि तन भ-जन के काम का भी न रह जाय ॥ फलतः, विषयों से विराग श्रीहरि स्मरण में अ-तिशय उपकारी तथा अधिकारी और उपयोगी है ॥

(श्लो०) अनारोग्यमनायुष्यमस्वर्ग्यञ्चातिभो-जनम् । अपुण्यं लोकविद्विष्टं तस्मात्तत्परि-वर्जयेत् ॥ (श्रीमनुस्मृति)

(श्लोक) येहिसंस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते । आद्यन्तवन्तः कौन्तेय ! न तेषु रमते बुधः ॥

(श्रीभगवद्गीता)

(दो०) रसना ! "सीताराम" रस रसरस
मधुर लेहु । परसै जनि पट रस
निरस सरसै नित नव नेहु ॥

(श्रीसीतारामचन्द्रप्रसाद)

(चौ०) सीताराम नाम तव सरसै ।
जब जिह्वा पट रस नहिं परसै ॥

(श्लो०) नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्त-मनश्नतः । न चातिस्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ॥ युक्ताहार विहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु । युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥ (श्रीभगवद्गीता)

(कवित्त) रचि काम राचिये न विरचि कै त्यागिये, न बैठि हठि जागिये न भूलि नींद लहिये, लोभ कै न गाड़िये दुकान दान मांड़िये, न छांड़िये व्यसन पाप पुण्य में न बहिये। अफरिसों खाइये न आतमा लँघाइये न, वादहि बढ़ाइये न मौनताही गहिये। राखिये सहज सर्वसमता, अनन्य भनै, "नाम योग" साधि ऐसी "युगुति" सो रहिये॥ (अनन्य)

किन्तु, सावधानी से बैठे हुये, और प्रायः खड़े, टहलते फिरते, चलते, शरीर रूपी यान के स्वास्थ्य की सब प्रकार से युक्त अभिरक्षा करते हुये, भली भांति देहरीदीप न्याय से श्रीनाम का जप हो सक्ता है सुरति रखसकते हैं; "ठाढ़े बैठे पड़े उताने, कहैं कबीर हम उसी ठिकाने" श्रद्धा सहित दुःखरहित सुमिरनी एक तार डोल सक्ती है; "राम" और रति ये दोनों रकार तथा मन और माला ये दोनोंही

मकार भी एक साथ हो के माधुर्य्यमूर्त्ति मृदुवर मनोहर मदनमानहारी महेशमन-मानसविहारी श्रीमैथिली प्राणवल्लभ के महामन्त्र (रामेति) के द्वारा मनन और सहज सुलभ सुमिरन का काम दे सक्ते हैं॥ इस प्रकार से चारों मकार के इकट्ठे होते ही कृतकृत्यता चारो पूर्णचरणों से पूर्ति को प्राप्त होती है और जीव सहज स्वरूप पाता है॥

(वि० प०) जो तेहि पन्थ चलै मन लाई।
तौ हरि काहे न होयँ सहाई॥ (श्री द गो०)

सबेरे रात को साढ़े नव बजे सो रहने से सबेरे भोरे साढ़े तीन बजे उठने का स्वाभाविकाभ्यास स्वास्थ्यपूर्वक हो जाया करता है; इस में प्रकृति भी (यदि नियम न टूटे ठीक रहे तो) कदापि कोप नहीं करती है। स्नानादिक से निपट के नाम जपने के अर्थ ब्रह्ममुहूर्त्त से पहले आसनी पर प्रस्तुत हो सकते हैं, स्वयं कर देखिये॥

और जिस अबल को थोड़ी बैठकी में भी कटिव्यथा हो उठती हो, सो यदि जाप के समय हिलता रहे तो ऐसी पीड़ा से बच सकता है; और खड़े खड़े सब से सुलभ; परन्तु यह सब कुछ अपने अपने अभ्यास के अधीन है। अपनी अनुकूलता के अनुसार नियम करना उचित है॥

(शेर) जो जानते हैं कि क्या है औ कैसा
है यह नाम। सो कैसे प्रेम से कहते
हैं जी से सीताराम॥
(पं० श्रीरामहितोपाध्याय)

(शेर) कुछ शोच तो परिणाम को, तजदे
विषय औ काम को, पावेगा मन
विश्राम को, सियराम जप सियराम
जप॥(कृष्णदेवनारायणसिंहरामकृत)

मन्त्र अरु नाम हैं अनन्त अनेक; सब से बढ़के तथापि है यह एक, जपते मुनिगन हैं जिसको धरके टेक, रामनामैव राम नामैव॥ १॥

मुक्ति भुक्ती औ सीयपियपद प्रेम; मन्त्र वर से ही सब है योग और क्षेम; जपते जो हैं महेश करके नेम, रामनामैव राम नामैव ॥ २ ॥ (लाला श्री ५ तपस्वीराम)

(दो०) ऐसो कौन अभागिया, कछू दृढ़ावे और। नाम विना पग धरन को, तिल भर नाहिन ठौर ॥ (श्रीदादूजी)

जैसे, रोटी का मिलना कदापि किसी के उद्योग से नहीं किन्तु उसकी प्राप्ति निःसन्देह भगवत् की इच्छा ही के अधीन है, तैसे ही इसमें भी कदापि तनवहू सन्देह नहीं कि श्रीनाम के जपने में भी मन की वृत्ति तथा सुरति और जिह्वा प्रभृति की प्रवृत्ति परवश जीव के अधीन किसी भांति नहीं है, किन्तु परम स्वतन्त्र हृषीकेश श्रीजानकीश की ही कृपाश्रित है; यद्यपि तीनों काल में यथार्थ व्यवस्था तो यही है ऐसा ही है ऐसा ही है तथापि प्रभुइच्छानुकूल रीति कुछ ऐसी

बँधी है कि सन्तों और वृद्धों की आज्ञा अवश्यमेव ही सुउद्योग करने की होती है; और सब लोग प्रारब्ध भवतव्यता वा संस्कार के आश्रय न रहकर सारे दिन रोटी लंगोटी के हेतु नाना कर्मों तथा त्रिविध प्रयत्नों में उपस्थित और प्रवर्त हैं ही, बरन यहां तक कि उन्हीं उद्यम कर्मों और धन्धों का क्रम रात्रि पर्यन्त चला जाता है ॥ क्या यह साक्षात् प्रकट और प्रत्यक्ष नहीं है?

तस्मात्, रे मन! तू भी यह न कर कि "पथ्य गपक्क और ओषधि थू", बरु चेत करके तत्पर हो और श्री नाम न रटने के विषय में प्रारब्ध अथवा परमेश्वर पर भार वा व्यर्थ दोष धरना एवमादि चतुराई और पाखण्ड को छोड़कर, श्रीसीताराम सीतारामेति रटने के धुन में वैसाही प्रस्तुत और उद्यत हो जैसा रोटी के अर्थ लगा रहता है ॥ "कहे कबीर एक

राम नाम बिन डूबी सब चतुराई॥"
लोकोक्ति भी है कि "वृक्ष लगावे नर, फल लगावे हर"॥ "भाग्य पुरुषार्थ आधे आध"।

घोड़े और पहिये के न्याय पर ध्यान देने से पाया जाता है कि रथ के चलने में ये दोनों ही परस्पर उपयोगी और सहायक हैं। एक के बिन एक नहीं॥ अर्थात् रथ के पहिये जहां तक ठीक, सुदृढ़ और शीघ्रता से घूमनेवाले होते हैं, उतनी ही प्रसन्नतापूर्वक घोड़ा रथ को खींचता है; तथा अश्वबल विना तो पहियों का हिलना डोलना भी कदापि सम्भव नहीं, और जितनी अधिकतर चाल घोड़े की होती है उतने ही तीक्ष्ण वेग से पहिये घूमते हैं॥ तात्पर्य्य यह कि दोनों की क्रिया परस्पर अनुकूल चाहिये; अस्तु॥

इन्द्रियों का श्रीनाम की ओर लगना

सोई तो क्रिया प्रवर्त्त पहियों के स्थान है, और नामी अन्तर्यामी सर्वस्वामी भक्तानुगामी श्रीसीताराम (नमामि नमामि नमामि) की जो कृपाकटाक्ष सो ही अश्वबल स्थाने है ॥ इस से अपना आशय यह है कि बट बीज न्याय से अनादि कृपा करुणा प्रभु की ज्यों ज्यों सहायता आकर्षण और बल करती है त्यों त्यों अन्तःकरण और बाह्यकरणों की प्रवृत्ति नामाभ्यास में होती जाती है, (नहीं तो प्रभुकृपा बिन रामराम ! एक ही माला पहाड़ हो जाती है); तथा जैसे जैसे जितना २ मन और माला श्री नामाराधन करते जाते हैं, तैसे तैसे उतनीही कृपा और सहायता भी नामाभ्यास में प्रभु की ओर से बढ़ती हुई जाती है; और फिर त्यों त्यों अभ्यास दिन दिन क्रमशः अधिकतर बढ़ता चलता है, एवमादि, समझिये; अस्तु ॥

प्रयोजन यह कि खींचनेवाले पर मिथ्या दोष धरके पहियों को ठीक न करना उचित नहीं॥

इस फेर में और इस पंक में भूल के भी न अटक रहना कि पहिले किसकी चाल? यह तो यथार्थ है ही कि खींचनेवाले ही के आधीन पहियों का डोलना है परन्तु तब भी कुशल इसी में और उचित यही मत है कि वृक्ष बीज की नाईं दोनों ही की परस्पर अतिशय आवश्यकता बोध होवे और माला यथाशक्ति चल निकले।

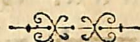
प्रसंगतः एक दूसरी बात भी। वह यह कि नामाराधन का फल नामी की प्राप्ति है? कि नामी के मिलने का फल, निश्चय हरि-संस्मरण को मन में रखना है?

परन्तु आज यहां इसके सुलझाने की अथवा इस प्रश्न के अधिक और विशेष उत्तर की किञ्चित् भी आवश्यकता नहीं

है; साधन सिद्धस्वरूप नाम के विषय में इतनाही मात्र यहां कहूंगा कि–

"को जानै को जैहै यमपुर, को सुरपुर, परधाम को, सुमिरत भजत यहीं भल लागत तुलसी राम गुलाम को" तथा

(चौ०) "बार बार विनवौं कर जोरे।
मन परिहरै चरण जनि भोरे॥" (श्री गो०)



ध्यान और जप ये दोनों परस्पर एक दूसरे के बड़े भारी उपयोगी हैं यह बात मनस्थ रखने की है। अर्थात् ध्यान से सुमिरन और जाप का बल बढ़ता है, और कहीं यह बात भी पहिलेही कही जा चुकी है कि ध्यान और जप को विषयों के विराग से और विराग को अभ्यास से बल और सहायता मिलती है॥ फलतः; अभ्यास का अधिकार विराग में; विराग का अधिकार ध्यान में, ध्यान का स्मरण में जानना अथवा उसी

बात को यों कहिये कि सुरति ध्यान से, ध्यान विराग से, विराग अभ्यास से बढ़ता है जैसे पैदल अकेले होने की अपेक्षा रथारूढ़ होने से रण में वीर को सहायता पहुंचती है और बल बढ़ जाता है ॥

(श्री रामस्तवराज श्रीनारदवचनम्)

(श्लो०) अद्य मे सफलो यज्ञस्त्वत्पादाम्भोजदर्शनात् । अद्य मे सफलं सर्वं त्वन्नामस्मरणं तथा ॥ इत्येवमीडितो रामः प्रादात्तस्मै वरान्तरम् । विरराम महातेजाः सच्चिदानन्दविग्रहः । अद्वैतममलं ज्ञानं त्वन्नाम स्मरणं तथा ॥

ठीक कहा गया है कि मनुष्य, साधन का धाम वरु " अभ्यासों " का पुञ्ज मूर्तिमान् है; यह बात सबही के देखने में आया करती है कि अचेतपन और स्वप्न तथा मूर्च्छा के उपरान्त जब संज्ञा आती है तो मुख से वेही शब्द अनायास निकल पड़ते हैं जो चैतन्यता के समय में प्रायः

उच्चारण हुआ करते थे। एवं जिस शब्द का जिसको सदैव बान वा अभ्यास रहा करता है अचानक में और अचेतपन में वही शब्द वह बोल उठता है तथा मरने के समय प्रायः वही उसके मुख से निकलते पाया जाता है। तस्मात् रे मन! यदि तू चाहता है कि श्रीसीताराम कृपा से अन्त काल में श्रीसीतारामेति स्मरण हो तो अभी से सदैव आठो पहर साठो घड़ी श्रीसीताराम कृपा से प्रार्थना पूर्वक सविनय इसीका अभ्यास कर॥

(शेर) सियराम जपने का मज़ा जिसकी
ज़बां पर आगया। तारन तरन सो
होगया चारों पदारथ पागया॥

क्योंकि केवल सामान्य यतन से ऐसी सुघटना नहीं सम्भव है। (श्री सीताराम कृपा के भरोसे और आश्रय) अन्त में श्रीरामेति कहना आवने के अर्थ बहुतही

भारी सघन सविनय अभ्यास की आवश्यकता है ॥

(चौ०) जन्म २ मुनि जतन कराहीं।
अन्त राम कहि आवत नाहीं ॥

बड़ेही भाग्यशाली वा कृपापात्र के मुख से मरने के ठीक समय श्रीराम नाम आता है ॥

(चौ०) देखादेखी, हांसिहु, रोखेहु।
बैरहु, दम्भहु, कैसेहु, धोखेहु ॥
विवसहु जासु नाम मुख आवा।
अधमौ मुक्त होत श्रुति गावा ॥

१ (दो०) राम राम कहि तनु तजहिं, पावहिं
पद निर्वान ॥ १ ॥

(दो०) रामानुज कहँ ? राम कहँ ?, अस
कहि छांड़ेसि प्रान। धन्य शक्रजित
मातु तव कह अङ्गद हनुमान ॥ २ ॥

(श्लोक) अन्तकाले च मामेव स्मरन् मुक्त्वा कलेवरम्। यः प्रयाति स मद्भावं

याति नास्त्यत्र संशयः (श्रीभगवद्गीता)
पतितः स्खलितश्चार्त्तः क्षुत्वा वा वि-
वशोऽऽ ब्रुवन् । हरये नम इत्युच्चैर्मुच्यते
सर्वपातकात् (श्रीमद्भागवत)॥

(दो॰) राम चरण दृढ़ प्रीति करि, बालि
कीन्ह तनु त्याग । सुमनमाल जिमि
कण्ठ ते गिरत न जानै नाग ॥

श्रीराम, कृष्ण, नारायण, हरि, ॐ, तत्, सत्, विष्णु, वासुदेव, केशव, माधव, गोविन्द, जनार्दन, अनन्त, परमात्मा, व्यापकब्रह्म, जगदीश, सच्चिदानन्द इत्यादिक जो असंख्य नाम श्रीसीताराम के हैं तिन में से यद्यपि कोई न्यूनाधिक नहीं बरन एक से एक निःसन्देह बढ़ के है, तथापि श्रीसीताराम के उसी नाम को जी में विशेष करके धारण कर लेना चाहिये जो श्रीगुरु भगवान् ने दिया हो । हां इतना कदापि न भूलना चाहिये कि जब तक जिह्वा रामेति दो अक्षर यथा

तथा जैसे तैसे किसी मिस से न रटेगी, तब तक कदापि पूरा नहीं पड़ेगा ॥

श्रीसीताराम " युगल " नाम का माहात्म्य तू (रे मन!) तभी समझ सकेगा जब विशेष श्रीकृपा हो, किन्तु एतना मात्र तो कहूंगा कि सब अपराधों को तो भगवन्नाम मिटाते हैं परन्तु स्वयं नामही के साथ जो दश अपराध हो पड़ते हैं, वे दशो तो और किसी भांति नाश नहीं पाते, वे युगल नाम को ही दीनतापूर्वक सादर जपने से छूटते हैं ॥

१ (दो०) पातक पुंज विनाश लगि जपैं राम इति नाम। नामहु के अपराध को, युगल नाम सिय राम ॥

२ तुलसी जनक सुता विना, जो सुमिरैं रघुवीर। शरद रयन विनु चन्द्रमा, द्रवै न अमृत नीर ॥

३ (श्लोक) सीतारामात्मकं ध्यानं सीतारामा-

त्मकार्चनम् । सीतारामात्मकं नाम जाप्यं परतरात्परम् ॥ (जा० वि० त्रि०)

४ सीतया सहितं रामनाम येषां परं प्रियम् । त एव कृतकृत्याश्च पूज्यास्सर्वसुरेश्वरैः (नृसिंहपुराणे)

५ (दो०) प्रेम रहस श्रीलालकौ, रसिकनमन सुखदयन । श्री राधा जहँ पग धरैं, कृष्ण धरैं तहँ नयन ॥

६ (श्लोक) श्रीसीताराममाहात्म्यं सुगोप्यं सर्वतः शुभम् । रसिकाः प्रेमसम्मग्ना जानन्ति तदनुग्रहात् ॥ (ब्रह्मरामायणे)

७ शक्या लोभयितुं नाहमैश्वर्येण धनेन वा । अनन्या राघवेणाहं भास्करेण प्रभा यथा ॥ (श्रीवाल्मीकीये)

८ (दो०) गिरा अर्थ जल बीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न । बन्दौं सीताराम पद, जिनहि परम प्रिय खिन्न ॥

६ "सी" कहते सुख ऊपजै, "ता"

कहते तम नास। तुलसी, "सीता"
जो कहे, राम न छाड़ैं पास॥

१० (श्लोक) सूर्यमण्डलमध्यस्थं रामं सीतासमन्वितम्। नमामि पुण्डरीकाक्षममेयं गुरुतत्परम्॥ (श्रीरामस्तवराजे)

जब मन कर्म वचन तीनों का ऐक्य हो तब तो सन्देह की कोई बातही नहीं रहती, परन्तु जहां वचन और मन एक न हों, तहां वचन के गुण दोष का निर्णय मन के भाव कुभाव के अनुकूल होता है;

केवल एकही नाम जपने के भाव का उदाहरणः—

१ (श्लोक) अहं जपामि देवेशि रामनामाक्षरद्वयम्। श्रीसीतायाः स्वरूपस्य ध्यानं कृत्वा हृदिस्थले॥ (आदित्य उपपुराणे)

२ (कुभाव के अनुरूपफल)

(श्लोक) गौरतेजो विना यस्तु श्यामतेजः समर्चयेत्। जपेद्वा ध्यायते वापि सभवे-

त्पातकी शिवे ॥ (सम्मोहनतन्त्रे)
यावन्नकीर्त्तयेद्दस्या* नाम कल्मषनाशनम्।
अनन्तकोटि जपितोपि न रामः फलसाधकः ॥
(लोमशसंहितायाम्)

श्रीसीताराम, राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण, उमामहेश्वर, गौरीशंकर, युगल नामों पर साधारण लोक प्रायः यह आशंका कर उठते हैं कि जगत्पिता से जगज्जननी का नाम पहिले क्यों ?

इस प्रश्न का उत्तर प्रथमतः तो युक्ति से यह प्रसिद्ध ही है कि बालक पूर्व में माता की परिचय पाता है और "मा" का उच्चारण सीख जाता है, पश्चात् पिता का। और लोकव्यवहार में भी (शंका करनेवालों को छोड़कर) और सब लोग सीधेही नाम लेते हैं उलटे नहीं ॥

अब शास्त्र का प्रमाण लीजे "पितुर्दशगुणा माता गौरवेणातिरिच्यते" ॥

---

*अस्यानाम अर्थात् श्रीसीतानाम।

पुनः पूर्वाचार्य्यों के सद्ग्रन्थों में भी सीधाही नाम आया है, कौमुदी के तद्धित समाससूत्र में, श्रीबाल्मीकीय में, मनुस्मृति में, श्रीरामतापनी में गीतगोविन्द में, रघुवंश काव्य में, श्रीमानस रामचरित में, क्यों न देखलीजिये कि उलटा नाम आया है कि सीधा अर्थात् शक्ति का नाम पूर्व में है कि नहीं ॥

फिर * यह भी सुनलीजे कि जान बूझकर व्यर्थ हठ करना बुरा है ॥

(श्लोक) आदौ शक्तिं समुच्चार्य पश्चात् पुरुष-
मुच्चरेत् । विपरीतं जपेद्यश्च ब्रह्म-
हत्यां लभेत्तु सः ॥ [ब्रह्मवैवर्त्ते]

निस्पृह श्रीनामाभ्यासी रसिक जन "हरमोनिया" वीणा बंशी बांसुरी और जोड़ी मँजीरा मृदंग सितार प्रभृति मधुर यन्त्रो के साथ, विशेष मधुर स्वर से अतीव

*नवीन नामोन्मुख जनों की सावधानता के हित ॥

मिष्ठ रागरागिनी में श्रीसीताराम नाम का सप्रेम संगीत करते हैं, प्रिया प्रियतम को रसिकवृन्द रिझाते हैं; वह सुख वह रीति श्री युगल नाम गान की, अकथनीय है सुनतेही बनता है॥

इसके आचार्य्यों की जय॥

(चौ०) वन्दौं श्रीनारद मुनि नायक।
करतल वीण "राम" "हरि" गायक॥

(श्लोक) कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम्। आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम्॥

वन्दे चन्द्रकलां देवीं वीणावादन तत्पराम्। रासवेश्मनिभावज्ञां जानकीप्रेमविह्वलाम्॥

(दो०) चन्द्रकला कमनीय कल कामद करुणा अयन। वन्दौं पिय प्यारी प्रिया कञ्ज खञ्ज मृगनयन॥

अरु किसी २ संत की ऐसी निराली

रीति है कि जैसे पुरुष का नाम स्त्री कभी उच्चारण नहीं ही करती परन्तु किसी क्षण कदापि बिसरती नहीं तैसेही वे भी बाह्य में प्रभुका नाम कदापि नहीं लेते॥

कभी, साधारणतः पहर दो पहर वा दो चार मुहूर्त्त वा किसी समय भर का अविचल नियम करके स्थिर विपुल प्रेम से खुले खुले स्पष्ट बैखरी में धीरे धीरे सीताराम नाम विना माला के रटा करते हैं॥

कभी, कोई कोई संत राम राम लिखा करते हैं॥

कभी, औरों को कुछ देकर नाम जपवाते हैं; और आप चित्त दे के सुना करते हैं; उसका आनन्द लेते हैं; और उसके साथ साथही, सुन्दर, स्वयं उनका अपना जाप भी होता रहता है॥

कभी, "राम सहस्रनाम" "जानकीस्तवराज," "रामस्तवराज" "रकारादि मकारादि"

वा "विष्णुसहस्रनाम" का पाठ करते हैं; और उसमें कभी कभी कोई कोई "नमामि वा नमः वा जयतु" प्रति नाम के साथ मिला लेते हैं; ऐसी विष्णुसहस्रनाम की "नामावली" छपी भी मिलती है ॥

कभी, "सहस्र नाम रामायण" का वा "श्रीयुगलनाममञ्जरी" का वा "नामकीर्तन" का अथवा "श्रीसीतारामनाम" का पाठ करते हैं जिसमें केवल सीताराम ही सीताराम मात्र सम्पूर्ण पत्रों में †† छपे हुये हैं जैसे

सीताराम	सीताराम	सीताराम	सीताराम
सीताराम	सीताराम	सीताराम	सीताराम
सीताराम	सीताराम	सीताराम	सीताराम

☞ सा० आ० प० अम्बिकादत्त व्यासकृत ८१ श्लोक (३३ पृष्ठ) में "सहस्रनामरामायण" संवत् १६५० की ॥

श्री ६ सीतारामशरण रसरंगमणि (अयोध्या) प्रणीत बयालीस रोला छन्द में "श्रीयुगलनाममंजरी"

†† श्री अयोध्या जी के महात्मा रामगोपालदास जी ने छपवाई है जो श्रीकनकभवन के सम्मुख विराजते थे।

श्रीतुलसी जी की माला पर जपते हैं, (संख्यापूर्वक; जितनी मालाओं का नियम किया हो)॥

प्रायः देखा जाता है कि नाम संकीर्तन करनेहारे मूर्त्ति झांझ ढोलक डरू लेके दो दल होके वा दो पंक्ति बांधके एका-एकी प्रति दलवाले अति उच्चस्वर से गाते हैं जिसकी ध्वनि तथा प्रतिध्वनि से वायुमण्डल और मन्दिर गूंज उठता है ऐसे कीर्त्तन के कई शब्द * उदाहरण मात्र के लिये यहां लिख दिये जाते हैं–

१ जय सीताराम सीताराम सीताराम सीताराम॥

२ श्रीराम जय राम जय जय राम।

* थोड़े से यहां लिखे गये, और जिला सारन ग्राम बगौरा के निवासी डिप्टी बाबू सीतारामाश्रित द्वारका-प्रसाद जी कृत "श्रीसीतारामनामकीर्तन" में पाइयेगा कि जो म० कु० बा० रामदीनसिंहजी के खड्गविलास प्रेस (बांकीपुर) में छपी है॥

३ हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे, हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।

४ श्रीरामचन्द्र राघवेन्द्र जानकीपते, श्रीजानकीश कौशलेन्द्र मैथिलीपते।

५ श्रीजानकीजीवन शोभाधाम, प्रणत-सुखद करुणानिधि राम।

६ श्रीजानकीवर राम करुणासिन्धु तमरिपुकुलमनी, रघुवीर सीतानाथ शारँगबाण-धर त्रिभुवनधनी।

७ जय जय सीताराम की जय बोलो हनुमान की, भरत लषन रिपुदमन सु-जानकी।

८ जय सरयू की श्रीभक्ति की सिय-रामकी सुजानकी, भरत लषन रिपुहन की हनुमान की।

९ जय रघुनन्दन जनकदुलारी, जोड़ी सुन्दर मङ्गलकारी।

१० लली जी लाड़ली जी किशोरी जी

सियाजी, प्यारी जी दुलारी जी स्वामिनी जी सिया जी ।

११ पतितपावन सीताराम, अधमउधारन सीताराम । पन जन तन मन सीताराम, सर्वस अन धन सीताराम ॥

१२ जय दशरथसुत जनककिशोरी, सीताराम मनोहर जोरी ।

१३ रामं रघुवरं वीरं धनुर्वेदविशारदम् । मङ्गलायतनं देवं रामं राजीवलोचनम् ॥

१४ भजु सियरघुपति भजु सियरघुपति, सियरघुपति भजु मन मेरो । सियरामहि जपु सियरामहि जपु याही ते मंगल तेरो ॥

१५ बलि जाउँ राममङ्गल करन, बलि जाउँ राम अशरनशरन ॥

१६ जय राम जय सीतारमन, जय जानकीपति सुखसदन । शारँगधर साकेतपति अवधेशसुत संसृतिशमन ॥

१७ भवभयभंजन जय श्रीरामू, जन मन रंजन जय श्रीरामू ।

१८ श्रवण नयन मुख मन सियराम। परम सिद्ध साधन श्रीनाम॥

१९ जय करुणाकर त्रिभुवन स्वामी। राम नमामि नमामि नमामी॥

२० जय मैथिलीवर जानकीवर सीयवर वैदेहिवर। जय धर्मधुरधर धरनिधर निज टेक धर शारंगधर॥

२१ प्रानप्रीते प्रीतम प्यारे, प्रीतम प्यारे प्रान प्रीते। सीते राघव सीते राघव, राघव राघव सीते सीते॥

२२ रट रसना ते, सुमिर हियाते, सीते राघव मुखते हीते, सीते राघव सीते राघव, राघव राघव सीते सीते॥

२३ सीतारमन सुषमासदन रघुवीर भजु नित नेम से, सियराम जपु सियराम जपु सियराम जपु मन प्रेमसे॥

२४ राम कहत चलु राम कहत चलु राम कहत चलु भाई रे। नहिं तो भवबेगारि परिहौ पुनि छूटब अतिकठिनाई रे॥

२५ जयतु राघवो जानकीयुतो जयतु बालिहा सेतुकारकः, जयतु रावणादिप्रमर्दको, जयतु जानकीं रञ्जयन् स्थितः ॥

२६ रघुवीर करुणासिन्धु आरतबन्धु जनरक्षक हरे, आठो पहर तीसो घड़ी जन हेतु जो शरधनु धरे ॥

२७ कमला विमला मिथिला धाम । श्री अवधसरयू सीताराम ॥

२८ जय जय जय श्रीराम प्रिया श्रीसीता प्रिय जय । जय जय जानकीकान्त रामकान्ता करुणामय ॥

२९ जय रघुनन्दन शोकनिकन्दन जय जय जनकसुते । जय रघुराई जनसुखदाई जय जय जनकसुते ॥

३० राघव सुन्दर श्याम सियावर रामा । जानकीवल्लभ राम कृपासुखधामा ॥

३१ राम राम राम राम राम राम जपत, मंगल मुद उदित होत कलिमल छल छपत ॥

३२ जय जानकीवर श्यामसुंदर राम राघव पाहि माम्। जयति करुणाधाम पूरणकाम राघव पाहि माम्॥

३३ जानकी जीवन सुंदर श्याम कृपासुखसिन्धु सरोरुह लोचन। अतिही मनरंजन शोकविभंजन भूरिकृपा प्रणतारति मोचन॥

३४ जैति जै श्रीजानकीजीवन करुणायतन सुषमासदन राम सुखसिंधु श्रीपते। विपिनप्रमोद प्रभु परम उदार सुख शील के अगार श्याम दीनबंधु श्रीपते॥

३५ अहल्यास्तोत्रविषयो, मिथिलाभूमिपावनः। विश्वामित्रानुगो मान्यो, मिथिलेशकृतादरः॥

३६ करुणासुखसागर सब गुण आगर जेहि गावहिं श्रुति संता। सो मम हित लागी जन अनुरागी भये प्रकट श्रीकंता॥

३७ दिनेशवंशमंडनं महेशचापखंडनं, मुनीन्द्रसंतरंजनं, सुरारिवृन्दभञ्जनम्॥

३८ अवधेश सुरेश रमेश विभो, शरणागत मांगत पाहि प्रभो ॥

३९ सगुन अगुन गुनमंदिर सुंदर सीताराम भजहु प्यारे। भ्रम तम प्रबल प्रताप दिवाकर सीताराम भजहु प्यारे ॥

४० जय रघुनन्दन जगदभिनन्दन जय जय जनकसुते। जय वर निगम गदित गुण संचय जय जय भुवननुते ॥

४१ जय जितदूषण सुरकुलभूषण जय जय हरिदयिते। जय कवि विमल विरोचन सुन्दर जय जय निखिलहिते ॥

४२ जय दशमुख तृण निकर हुताशन जय जय सुव्रतिमणे। जय जन सदय हृदय सकलेश्वर जय जय नत चरणे ॥

४३ जय निज सेवक गण भव नाशक जय जय पुरु करुणे। वस हरिचित्तसि विमलरसधारिणि जय जय महितगुणे ॥

४४ रघुवर सुन्दर श्याम सिया द्युति

दामा ।, मनमोहन जोहन योग युगल जस नामा ॥

४५ श्रीजानकीवर, राम, हरि, सीतापति, भगवान; कमलनयन, रघुवंशमणि, करुणासिंधु, सुजान ॥

इत्यादि, एवमादि ॥

कितने व्यक्ति की यह उत्तम चाल होती है कि, काम किये जाते हैं किये जाते हैं परन्तु जब कभी कहीं श्रीराम कृपा से सुधि हो आई तो उसी क्षण उनने दश बीस बेर भगवन्नाम का उच्चारण कर लिया; फिर मोह मग्न हो घोर सांसारिक प्राकृत व्यापार के कठिन झमेले में उलझ गये; ज्योंही श्रीसीताराम कृपा से पुनः चेत और संज्ञा आगई त्योंही बीस पचीस आवृति प्रभुनाम रट लिया; एवमादि, पुनः विस्मृत्ति पुनः स्मृति, विस्मृति स्मृति पुनः पुनः; रे मन ! भला इस चाल से भी तो तू अपना कालक्षेप किया कर ॥

१ (चौ०) भूलहिं पुनि पुनि चेतहिं पुनि पुनि। प्रभु सम्बन्धी कछु जोइ सोइ मुनि॥ [दीन]

२ (दो०) विषय मगन मन! जबहिं जब ह्वै आवै तोहि चेत। "राम राम" कहु तबहिं तब, ज्यौं त्यौं प्रेम समेत॥ [जानकीशरणजी]

३ (श्लो०) अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते। तेऽपि चातितरंत्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः (भ० गी० १३ २६)

४ (सो०) मन हरि पद अनुरागु, करहु त्याग नाना कपट। महामोह निशि जागु, सोवत बीतो काल बहु॥ (श्री ६ गोस्वामी जी)

५ (दो०) सगुण ध्यान रुचि सरस नहिं, निर्गुण मन ते दूरि। तुलसी सुमिरहु राम को, नाम सजीवन मूरि॥ "हम" लखु "हमहिं" "हमार" लखु "हम हमार" के बीच। तुलसी अल-

खहिं का लखसि ? रामनाम जपु नीच ! [श्री ६ गोस्वामी जी]

मोर मोर सब कहँ कहसि, तू को ? कहु निज नाम। कै चुप साधहिं सुनि समुझि, कै तुलसी जपु राम॥

प्रायेण बहुतेरे मूर्त्ति दश अष्टोत्तरी मालाओं के मणियों को एकट्ठे पिरोकर एक (सहस्र मणि माला) करलेते हैं; और उसको एक झोरी में डाल रखते हैं। जब तक नियम की संख्या परिपूर्ण नहीं होती चलते डोलते भी झोरी को गले में लटकाये माला * फेरा करते हैं॥

* प्रतिदिन ऐसी माला सावधानतापूर्वक सादर ठीक ठीक ३२ (बत्तीस) फेर चुकने के उपरान्त जिस दिन कोई व्यक्ति आगे और अधिक माला "सीताराम" नाम की फेर चलता है, तो एक बेर मात्र नाम उच्चारण करने के समय पर्यन्त माला का जितना भाग खिचआता है, उतने भर में जितने अमनिये होते हैं तितने नाम लेने के तुल्य यह होजाता है॥ जिनके श्रवण में यह बात पहलेही पहल पड़े वे शङ्का न करें, क्योंकि, जब दान प्रभृति कर्मों

कभी, जाप करने की माला जो दक्षिण कर में रहती है उसके अतिरिक्त बायें हाथ में भी एक माला वा सुमिरनी रखते हैं जिसपर जापके माला की गिन्ती होती है॥

कभी, नियम किये भये काल पर्य्यन्त मानसिक अङ्कों अथवा वर्णमाला प्रभृति असाधारण सुमिरनियों पर सावधानता पूर्वक जपते हैं; और कभी श्रीगुरु कृपा से किसी अनिर्वचनीय गोप्य अपूर्व दिव्य सुमिरनी पर भी जपते हैं॥

कभी, अर्थात् किसी समय पर्य्यन्त प्रतिदिन, दृढ़तर नियमादि पूर्व्वक प्रभु के मन्त्र और गायत्री को जपते हैं॥

के सम्बन्ध में यह प्रसिद्ध ही है कि दानी एक एक अन्न कण का प्रतिफल अनेक गफ़फे पाता है तथा एक एक पैसे के दश दश मिलते हैं, तो भगवन्नाममहिमा का यह चमत्कार भला कितनी सी बात है और इसमें संशय वा शंका वा आश्चर्य का कौनसा प्रसंग ?

☞ भाल में श्रीराम नामयुत श्री, ऊर्द्ध्वपुण्ड्रादि (चन्द्रिका, मुकुट), कण्ठ में श्रीतुलसी की माला, कमलाक्ष की माला, बाहुमें श्रीधनुर्बाणादि (मुद्रिका) शंख, चक्र चिह्न अवश्यमेव होतेही हैं॥

"सजु हंस को वेष बड़ो सब ते, तजि दे बक वायस की करनी" (श्री ६ गो०)

कभी, श्री अंजनी पर्वत पर अथवा हनुमानगढ़ी में वा श्रीसरयू तीर आके, वा श्रीचित्रकूट में विराज के पयस्विनी नदी में स्नान किया करते हैं और नियम करके छः महीने पर्य्यन्त केवल फलही मात्र खाके सनेम रहके दिनरात श्रीसीताराम नाम सप्रेम जपते हैं॥

(दो०) चित्रकूट सब दिन बसत, प्रभु सिय
लषन समेत। रामनाम जप जापक-
हिं, तुलसी अभिमत देत॥१॥
पय अन्हाइ फल खाइ जपु, राम
नाम षट मास। सकल सुमङ्गल
सिद्धिवर, करतल तुलसीदास॥२॥
प्रीति प्रतीति सुरीति सों, जपु श्री

सीताराम । तुलसी तेरो अति भलो
आदि मध्य परिणाम ॥ ३ ॥

पांव पांव चलने वाला भी ठेकाने पर पहुँचता तो है पर उसके और डाकगाड़ी पर जाने वाले के बीचमें तनक अंतर है; कुछ इसी प्रकार की सी उपमा धुकुर पुकुर मन वाले जैसे तैसे जापकों की भी है उन महानुभावों की अपेक्षा कि जो श्रीसीताराम कृपा से विरक्ति, अनुरक्ति, भाव, विश्वास और नेमपूर्वक श्रीयुगल दिव्य मङ्गल नाम की आराधना करते हैं॥

कभी, केवल नियममात्रही भर जाप नहीं करते हैं वरन अहर्निश सुमिरनी फेरते रहते हैं, असंख्य और अगणित आवृत्ति सुमिरनी की श्रीसीताराम कृपा से निरन्तर अखण्ड दिन रात हुआ करती है; जीह देहरी द्वार पर श्रीराम नाम महा-मणि इस भांति विराजता है कि देहरी दीप न्याय से बाह्य और अभ्यन्तर उभय

प्रकाश होता है, तथा रसना श्रीराम नाम पियूष के धारा का रस लेती रहती है अन्तःकरण प्रभु के अभिमुख सम्मुख स्थिर रहता है। शब्द कोई नहीं सुनने पाता है, यद्यपि जिह्वा हिलती तो है तथापि ओष्ठ नहीं हिलते खुलते। ऐसी ही रीति और वृत्ति कितने और संतों की होती है॥

(दो०) "राम" नाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार। तुलसी भीतर बाहिरो, जो चाहसि उजियार॥ (श्री ६ गो०)

(दो०) जिय को फल पिय तबहिं जब, आठ पहर तव नाम। पिय! तेरो सुमिरन बिना, जियबो कवने काम (श्री ६ हंसकला)

(दो०) विष्णु सुअंतर राम के, विष्णु के अंतर राम। बहिरन्तर रसराम के व्यापक राम सुनाम॥ (श्री ५ रसरंगमणि)

"नाम सप्रेम जपौं मुख सो सुख सो मन तासु स्वरूप विशेषों" [श्रीर० र० म०]

(चौ०) तेहि जानिये नामी को प्रेमी।

जो मन वचन नाम रट नेमी ॥ [दीन]
(सो०) रे मन तोहिं न लाज, नाम जपत गिन्ती करत। संख्या को का काज? आठ पहर पिय सुमिरु जपु॥ [दीन]

कभी, आंखों के सामने सर्वदा सर्वत्र जहां तहां केवल सीताराम ही सीताराम हरे रंग में लिखा पाते हैं (☞ उनके पवित्र शरीर तथा पावन गृह तो प्रकट और स्पष्ट भी नामाङ्कित और श्रीरामायुधाङ्कित होते ही हैं)॥

वरन जगत् सियराममय दिखाई देने लगता है॥

कभी, ऐसी अवस्था होती है कि, चिकनी सी काली पट्टी पर रात को अंधेरी कोठरी में दियासलाई से खिंचे हुये चमकत चमचमाते हुये अक्षरों के सदृश, अतसी फूल के सम नयन सुखदायी अनोखे हरितश्याम रंग के अति महीन अक्षरों में अपनी नासिका के ठीक अग्रभाग

के ऊपर "सीताराम" नाम शोभते हुए पाते हैं, उसी पर, अपनी दृष्टि को सब ओर से समेट कर, जमा लेते हैं। उस सुख में डूब जाते हैं, उस संतोष तथा आनन्द की दशा को स्थिर एकांत चित्त वाले और प्रशान्त व्यक्ति पाते हैं॥ धन्य वे जिनकी आंखों में भी श्रीयुगल दिव्य मङ्गल नाम पुतलियों की भांति आसन लगाये हुए होतेहैं॥

कभी, श्रीसीताराम सुरति समाधि यतन मनन चिन्तन स्मरण के अर्थ कुम्भक त्रिकुटी सुरतसाधना, प्राणायाम प्रभृति योगों को भी, सहयोगी और उपयोगी कर लिया करते हैं। अलोल एकाग्र स्मरण की धृति स्थिति की रक्षा योग इस प्रकार से करता है कि जैसी सहायता वीर के शरीर की रण में कवच करता है अथवा जैसे घूंघट व्यभिचारी

नेत्रों को चंचलता से रोकता है वा जिस भांति नयन पट भड़कीले घोड़े को उद्वेग से बचाता है ॥ श्रद्धावान् श्रेष्ठ उपासक जन जिनकी आत्मा मन और सुरति श्रीहनुमत्कृपा से युगल दिव्य मंगल मूर्त्ति के चरणाम्बुज में भक्तियोग और प्रेमयुक्त निरंतर लगी रहती है ते धन्य हैं॥

(श्लो०) योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना। श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ॥ [श्रीगीता]
अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः। तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥
[भ० गी० ८-१४]

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला। समाधावचलाबुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि ॥ [भ०गी०२-५३]
कभी, किसी समय निःशब्द स्थान में

सावधान निश्चिन्त प्रशांत हो कुछ काल पर्यन्त कानों में मुद्रा दे, केवल सीताराम ही सीताराम मात्र अथवा श्रीराम किंवा "ॐकार" वा "रामराम" के मधुर गम्भीर अविरल कोमल ध्वनि को सुना करते हैं, (जैसी कि प्रभुता और सिद्धियों के अर्थी प्रमुखों में, घण्टा बांसुरी प्रभृति के नाना शब्दों के अनहद सुनने की चाल है)॥

(श्लो०) यः सहस्रारकमले शब्दोरस्य सना-
तनः। गुरुपादाब्जकृपया श्रुत्वा तं
मोक्षमाप्नुयात्॥

"कानन सो बहिरो होइ बाहर अन्तर नाम सुनाद परेखौं"॥ [श्रीरसरंगमणि]

कभी, श्रीसीताराम कृपा से निरन्तर अविरल अजपा जाप श्री "सीता-राम" वा "रा-म" का, वा शरणागति मन्त्र का वा बीजप्रणव का, वा "ॐ" कार प्रणव का, श्वास श्वास प्रति किया करते हैं (जैसा कि एक प्रकार के लोग "सो-हं" का करते हैं)

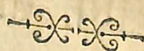
बाह्य से श्रीसीताराम कैंकर्य्य और परिचर्य्या में लगे रहें चाहे अति आवश्यक शारीरिक उद्यम में उलझे हों परन्तु तब भी श्रीगुरुकृपा से अजपा जाप की अविच्छिन्नता का प्रतिबन्ध कोई नहीं कर सकता। हां अभ्यास का तो सब में अधिक भाग और विशेष अधिकार कहाही जा चुका है॥

(श्लो॰) अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोऽपि मयि स्थिरम्। अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय॥ [भ॰ गी॰ १२-६]

(श्लो॰) रकारेण बहिर्याति, मकारेण विशेत्पुनः। रामरामेतिस्वच्छन्दो जीवो जपति सर्वदा॥

"सम्पति सारे जगत की, श्वासा सम नहिं होय"।

(मुंह न खोलके नाकहीसे श्वास लेना चाहिये)



"सो श्वासा, तजि राम पद तुलसी अनत न खोय"

(चौ०) अति अनन्य जे हरि के दासा।
जपहिं नाम निशि दिन प्रति श्वासा॥

[श्री ६ गोस्वामीजी]

कभी, कर्मेन्द्रियों के संयम से प्रारम्भ नहीं करके, पहिले ही श्री हनुमत्कृपा से सुरति से मन से बुद्धि से रसना से "सीताराम सीताराम" सादर सदैव सप्रेम अविच्छिन्न जपा करते हैं; मन लगे पर आप से आप सब इन्द्रियां उधरही लग जाती हैं, और जीह, श्रवण, नयन, श्वासा और हृदय कमल ये पांचों के पांचों बरन रोम रोम श्रीसीताराम नाम का अनुसंधान करते हैं॥

"रोमहि रोम रमे सियराम निधी रसराम स्वदेह में देखौं" [श्री ५ रसरंगमणि]

प्रभु कृपा से कारण [मन] के ठीक होतेही, कार्य्य निःसन्देह स्वभावतः ठीक ही ठीक जानिये॥

(दो०) श्रीसियपदपंकज गहे, पियमुख चन्द चकोर। सीताराम सप्रेम कहु श्वास सुरति मन मोर॥ [स्या० ना०]

(श्लो०) मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय। निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः॥ [भ० गी० भक्तियोग]

(वि० प०) रामराम रमु, १; राम राम जपु, २; रामराम रटु ३; जीहा ! (श्री ६ गो०)

(श्लो०) तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च। मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम्॥ [भगवद्गीता ८-७]

(चौ०) बिनु मनु तनु दुख सुख सुधि केही। मन तहँ जहँ, रघुपति वैदेही॥ [श्री ६ गो०]

(श्लो०) मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु। मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः॥ [भ० गी० ९-३४]

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु। मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे॥ [भ० गी० १८-६५]

(चौ०) तन ते कर्म्म करहिं विधि नाना।
मन राखहिं जहँ कृपानिधाना॥

"प्रेम जगावै जीव। पंच पुकारैं पीव"॥

(दो०) सुरति सदा साबित रहै तिनके मोटे भाग। दादू पीवैं प्रेम रस रहैं राम पद लाग॥ [दादू जी]

जाकी सुरत लगी है जहां।
कहैं कबीर सो पहुंचे तहां॥

सुरति सुहागिन नाचै तहवां।
प्रेमसिंहासन पियवा जहवां॥ [श्रीकबीर]

"समता संतोष संतसङ्ग गहे, रसराम, नाम सो सुरति सनी मानो मीन बारी हैं। जाके हिय सिय पिय बसैं ताके हिय का ही धन्यबाद बंदना हजारन हमारी हैं"॥

(दो०) होंठ, जीह, दृग, श्रवण, चित, "सीताराम" सुनेम। मुख, जिय, मन सिय-चरण धरि, पिय सों अद्भुत प्रेम॥ [दीन]

(श्लो०) कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते

मनसा स्मरन् । इन्द्रियार्थान्विमूढा-
त्मा मिथ्याचारः स उच्यते ॥
इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः
परं मनः । मनसस्तु परा बुद्धिर्यो
बुद्धेः परतस्तु सः ॥ [भ० गी।०३-४२]

एवमादि रीति से श्रीसीताराम नाम की सुधि सुरति मनन चिन्तवन यतन जपन रटन भजन कीर्त्तन के नाना प्रकार (गोप्य तथा प्रकट) अगणित और अपार हैं, कहे नहीं जा सकते; संक्षेपतः, सबका सार (रे मन !) यही है कि तू किसी भांति सब से सरस प्रभु को चाहे, सब से अधिक प्रभु में लगा रहै, चाहै जैसे हो, किसी प्रकार से हो, इसका कोई नियम नहीं, इदमित्थम् कहा जा सकता नहीं ॥

और अन्तःकरण को बाह्यकरणों के पीछे पीछे न दौड़ने दे ॥

(श्लो०) आराधितो यदि हरिस्तपसा ततः

किम् ? नाराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्। अन्तर्बहिर्यदिहरिस्तपसा ततः किम् ? नान्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम् ॥

(अथ नामापराध)

☞कदापि भूलना न चाहिये कि [सनत्कुमारसंहिता से] दसो "नामापराध" ये हैं—

(१) वेद की और भगवत् वचन की निन्दा।

(चौ०) कल्प कल्प भरि यक यक नरका।
पड़हिं जे दूषहिं श्रुति कर तरका॥

(२) सन्त की निन्दा वा लघुता।

जो अपराध भक्त कर करई।
राम रोष पावक सो जरई॥

(३) भगवत् विमुख को भगवन्नाम उपदेश करना नामापराध है॥

द्विजद्रोहिहि न सुनाइय कबहूं।
सुरपति सरिस होय नृप जबहूं॥

(४) गुरु की अवज्ञा वा अनादर॥

राखै गुरु जो कोप विधाता।
गुरु विरोध नहिं कोउ जग त्राता॥
गोविन्दहु ते अधिक अति, जानिये गुरुहि, प्रमाण॥

(५) मुक्ति के किसी साधन और शुभ

क्रिया को, किसी धर्म यज्ञ ज्ञान योग वा दान को, अथवा किसी उपायान्तर को, नाम से बढ़ के तो क्या बरन उसके बराबर भी जानना।

गिरि सम होहिं कि कोटिक गुञ्जा ॥
अमित कोटि खद्योत कबहुं की भानु सम ॥

(६) नाम के माहात्म्य में कोई कुतर्क वा कोई कल्पना॥

जैसे कि और साधन के साथ होने पर वा सहायतासे, नाम फल देता होगा; यदि नाम में इतनी बड़ाई होती तो कोई दूसरा कुछ और प्रायश्चित्त पुण्य किसी को क्यों उपदेश करता; एवमादि आसुरी कुतर्क वा नास्तिक कल्पना॥

☞नाम को स्वतन्त्रेण समर्थ जानना चाहिये किसी की इसमें अपेक्षा नहीं॥

(७) अहंता ममता के प्रमाद से भरे, ज्ञानी योगी बने, नाम के माहात्म्य में रोचक भयानक की वा अर्थवाद की वा मिथ्या बुद्धि करनी।

(दो०) 'अर्थवाद, नारायणः, अन्तर दोनों चार।
घोर नर्क को देय इक, लेवै एक उबार॥
(पं. शौकीलाल भार्गव)

(८) नाम की महामहिमा और परात्परत्व को सुनके भी नाम में विश्वास और श्रद्धा का न करना।

"पायहु अमृत जोना पीये। कहु पंडित कैसे सो जीये" ॥

(९) हरि और हर में भेद करना, श्रीराम से भिन्न शङ्कर को ईशता प्रतिपाद्य करनी नामापराध है।

(चौ०) रामहिं भजहिं तात शिव धाता।
नर पामर कै केतिक बाता॥
बिनु छल विश्वनाथ पद नेहू।
राम भक्त कर लच्छण एहू॥

(दो०) शङ्कर प्रिय मम द्रोही, शिव द्रोही मम दास। सो नर करै कल्प भरि, घोर नर्क महँ वास॥
औरौ एक गुप्त मत, सबहि कहौं कर जोरि। शङ्कर भजन बिना नर, भक्ति न पावै मोरि॥
जेहि इमि गावहिं वेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान। सोइ दशरथ

सुत भक्तहित, कौशलपति भगवान ॥
पुरुष प्रसिद्ध प्रकाशनिधि, प्रकट परावर नाथ। रघुकुलमणि मम स्वामि सोइ, कहि शिव नायेउ माथ॥

(१०) नाम के बल भरोसे पर जान बूझ कर पाप करना; कि अमुक पाप कर लें, नाम जपने से सब कल्मष कट तो जाहींगे।

(चौ०) जानि गरल जो संग्रह करई।
सुनो उमा सो काहे न मरई॥

प्रीति, प्रतीति, और पूर्व जन्म जन्मान्तर संस्कार, तथा वर्तमान सत्सङ्ग इत्यादिक बातें भी तो सब ठीक ही हैं और ध्रुव हैं ही, परन्तु अधिक भाग और विशेष अंश (नाम के चमत्कार में) अभ्यास की दृढ़ता ही का निरूपण किया गया है अविच्छिन्न जल के बिन्दु से तथा पनिहारिनि की डोरी से पत्थर कटते किसने नहीं देखे हैं?

(दो०) तुलसी हठि हठि कहत नित, चित

सुनि हितकरि मानि । लाभ राम सुमिरन बड़ो, बड़ी बिसारे हानि ॥ तुलसी, यहां जो आलसी, गयो आजकी कालि । राम नाम जपि जीह जन भये सुकृत सुख सालि ॥

क्या ऐसा नहीं देखा जाता है कि टेव या बान लगाने से प्रायः सैकड़ों मूर्त्तियों को यह अभ्यास पड़ जाता है कि बात बात में वे "राम आसरे" वा "हरिइच्छा से" वा "रामकृपा से" वा "सीताराम" वा "गोविन्दायनमः" बोला करते हैं; यद्यपि स्मृति वा सुरति नहीं भी हो और मन कहीं और भी रहे तथापि उस सुन्दर अभ्यास का प्रभाव वचनों में स्थित ही पाया जाता है। अपने वैष्णवों में जो सदाचार, निज वस्तुओं और आश्रितों के नाम श्रीविष्णु सम्बन्धी रखने का, सनातन से चला आता है क्या उसका फल प्रकट नहीं लक्षित होता है ? माला हाथ में आते ही (स्मृति के अभाव में भी) होठ हिलने

लगते हैं, यह किसको विदित नहीं ? यह बात किसके देखने में नहीं आती है कि जो सज्जन जिस २ समय पर जिस नाम के उच्चारण का सहज दृढ़ अभ्यास रखते हैं, उस २ अवसर पर, अनायास और विना इच्छाही, अवश्यमेव उनके मुंह से वह नाम स्वतः निकलही पड़ता है॥ वस्तुतः, प्रकृति और अभ्यास इन दोनों में परस्पर अतिशय अनुकूलता है॥ अतएव, अभ्यास, अभ्यास, अभ्यास; उत्तमोत्तम अभ्यास, अविरल दृढ़तम अभ्यास विश्वास संयुक्त अभ्यास विषय विराग पूर्वक अभ्यास तथा प्रेम सम्पन्न अभ्यास॥

(दो०) "राम राम" सुमिरन विना, व्यर्थ
न खोवहु श्वास। यह छनभंगुर देह
कौ, काह आस विश्वास॥

(श्रीमिथिलेश्वरी शरणजी, बहुवारा के)

जन्म जन्म की बिगड़ी हुई व्यवस्था,

प्रभु नाम छुटे किसी दूसरे उपाय के बनाये बनने वाली नहीं सँभलने की नहीं॥

जिह्वा सिंहासन पर श्रीराम नाम के रकार मकार रूपी दोनों चरण धरतेही सब सिद्धियां हाथ जोड़ के आ खड़ी होती हैं और ऐसी (श्रीरामनामाश्रिता) रसना जो कुछ उन्हें आज्ञा करे सो सब वे करती हैं॥

(दो०) जबहि नाम हिय संचरै, क्षुधा रहै
नहिं कोय। नाम मिलावै रूप को,
जो जन खोजी होय॥

कितने लोग यह आशंका और कुतर्क करते हैं कि "यदि भगवन्नाम ही सब पापों के भस्म और प्रक्षालन करने का पूरा पूरा सामर्थ्य स्वतन्त्रेण रखते होते, तो स्मृतियों में अनेक प्रायश्चित्त त्रिविध पातकों के निवृत्यर्थ क्यों लिखे हैं?" ऐसे शंकासमाधान के लिये बहुत खण्डन मण्डन वा विस्तृत पूर्व पक्ष उत्तर पक्ष

की आवश्यकता नहीं है। क्या शङ्का करने वाले, सेना के विद्यमान होने से सेनापति के अधिकार का अभाव सिद्ध किया चाहते हैं? क्या जीरा सोंठ पीपर प्रभृति खर बिरवों का भी उपस्थित रहना ही इस बात की उपपत्ति कहीं हो सकती है कि रामबाण वा नारायणास्त्रादिक महौषधी में महत्प्रभाव नहीं है? क्या राज में छोटे छोटे नाना न्यायस्थलों का भी विद्यमान होना ही इस बात का प्रमाण है कि स्वयं राजमन्त्री और चक्रवर्ती महाराज अतिशय योग्यता नहीं रखते हैं? क्या शंका करने वालों का अभिप्राय यह है कि यदि ब्रह्मास्त्र में ही विलक्षण भयङ्कर और विशेष सामर्थ्य होता तो असि और धनुर्बाणादि भी शस्त्र क्यों वर्त्तमान होते? एवमादि न्याय से समझ लीजे। अधिक युक्ति वा तर्क वितर्क अवश्य नहीं। नाम की महिमा परा से परा है॥

(श्लोक) वेपन्तेदुरितानि मोहमहिमा सम्मोहमालम्बते सातंकंनखरञ्जनींकलय ति श्रीचित्रगुप्तः कृती * सानन्दंमधुपर्कसंभृतिविधौ वेधाः करोत्युद्यमं वक्तुं नाम्नि तवेश्वराभिलषिते ब्रूमः किमन्यत्परम् ॥

राम त्वत्तोधिकं नाम इति मे निश्चलामतिः। त्वयैका तारिताऽयोध्या नाम्ना तु भुवनत्रयम् (श्रीहनुमद्वचनम्)

महात्मा कहते हैं कि वृद्धावस्था में नामस्मरण सोलह आने फलता है; अरु बालापन में बत्तीस आने; और यौवन में चौंसठ आने; तथा यह भी कि सर्व देश काल में, एक पाईही की तुल्यता और समता को जब सब साधन नेम धर्मपुण्य मिलकर भी नहीं पहुँचते तो चौंसठ आने व्यापार की लेखा कौन कर सकता है।

"ज्ञानमस्ति तुलितं तु तुलायां, प्रेम नैव तुलितं तु तुलायाम्। सिद्धिरेव तुलि-

(* लेखनी "कलम")

तात्रतुलायां, रामनाम तुलितं न तुलायाम्"
(दो०) धर्म्म पुण्य अतिशय बड़े, ग्रन्थन भरे अपार। नारायण श्रीराम इति, है पै सब को सार॥ [श्री ५ नारायणाचारी स्वामी जी भागलपूर के]

यह बात कि, जहां जहां फल प्रसाद और पय प्रसाद पा सकते हैं (खा सकते हैं) ऐसे ऐसे सब ही ठामों में महाप्रसाद वा और कोई कच्ची रसोईं प्रसाद नहीं पाने में (खाने में) आता है बरन चौका आसन और वस्त्र प्रभृति के कुछ विशेष आडम्बर किये जाते हैं लोक में अतिशय प्रसिद्ध है ही। कुछ ऐसीही सी रीति भांति और विधि व्यवहार गायत्री तथा मन्त्र के स्मरण और जाप के साथ है, तस्मात् नाम की ही सुगमताओं को इस स्थान में भी बर्तना उचित नहीं है, बरन यथेष्ट यथायोग आचार अवश्य है॥

वैष्णव संस्कार सम्पन्न विद्यार्थियों को

उचित है कि सूर्यग्रहण तथा चन्द्रग्रहण के काल को व्यर्थ नहीं खोना। स्पर्श के क्षण से, ग्रहण के मोक्ष पर्यन्त श्री हनुमत्कृपा से श्रीरामरक्षा और श्री सीताराम मन्त्र तथा श्रीजनकनन्दिनी दाशरथि की गायत्री और शरणागति मन्त्र का अनुसन्धान करना युक्त है और आदि अन्त समय श्रीसीताराम नाम का जाप॥

जिस भांति आंखों के शत्रु धूल, धूप, धूम (धुवां) और धुन्ध में लिखना वा पढ़ना, तिसी प्रकार से "सुमिरन" के वैरी (१) अभिमान और अतिशय कृतघ्नत्व, (२) अन्यवार्तालाप और असन्तन का साथ (३) असावधानता और अधिक आलस्य तथा (४) अन्य वा प्राकृत विषय के मनन संकल्प वा चिन्ता हैं॥

"तुलसी कबूं कि होतु हैं रवि रजनी यक ठाम"॥

इसमें कुछ सन्देह नहीं कि कोई कोई व्यक्ति शीश की पीड़ा झारना और एक-मादि नीच २ प्रयोग "ॐकार" का करते हैं॥ रे मन! भूलना नहीं चाहिये कि प्रभु के नाम, जो संसारसागर के पार करने के महामन्त्र हैं, तिनका अनादर यहां तक करना कुसंग के प्रभाव तथा सत्सङ्ग के अभाव से ही होता है॥ रे अल्पबुद्धि तुच्छमति! रे मन! सावधान रहना॥

नवीन नामोन्मुख जनों से (सावधानता के हित) प्रार्थना है कि, जो लोग भगवान् के नाम को साधारण शब्द समझे बैठे हैं; जिन की सारी पाण्डित्य परमेश्वर के नाम की महिमा स्तुति को केवल "अर्थवाद" इति कहने भर में अटकी हुई है; और यद्यपि सर्वदा सर्वत्र परमात्मा के नाम प्रताप की धूम मच रही है, लोक वेद में डंके बजरहे हैं तथापि उसका शब्द जिनको

सुनाई नहीं देता है; जिनके लेखे अमावस्या और पूर्णमासी की रात एक समान ही है; जिनको दिन दोपहर नहीं सूझता; जिनने नाम के माहात्म्य को भी कुछ ऐसा वैसा ही मान रक्खा है; और जो लोग आसुरी सम्पत्ति वाले हैं; उनका साथ धोखे से भी कदापि न करना॥

(दो०) सपनेहु करिय न सन्त, द्विज, मित्र,
दीन, मन भङ्ग। खल, मूरख, कपि,
नारि, अहि, हरि विमुखन को सङ्ग॥

[पण्डित श्री ५ रामनारायणदास जी]

(चौ०) काहुहि सुमति कि खल संग जामी।
शुभ गति पाव कि परतिय गामी॥
तिनकर संग सदा दुखदाई। जिमि कपिलहिं घालै हरहाई॥

एवम् भगवन्नामानुरागियों का सत्सङ्ग न छोड़ना क्योंकि मोहनाशक, ज्ञानवर्द्धक, पुण्यप्रद, प्रेमोद्दीपक और सब ही विधि सुखद है, जिनके लोकोत्तर बड़े भाग्य होते हैं उन्हीं को महानुभावों के चरणकमलों

के समीप बैठना मिलता सुहाता है॥

"सो जानब सतसंग प्रभाऊ।
लोकहु वेद न आन उपाऊ"॥

रे मन! यदि तू प्रभु के नाम में श्रद्धा चाहता है तो महानुभावों के पदपद्म को अपने हृदय में ला, और उनके रामस्मरण रहस्य को चित्त पर बैठाव॥

नाम प्रताप जान गणराऊ। प्रथम पूजियत नाम प्रभाऊ॥
नाम प्रताप जान शिव नीके। काल कूट फल दीन अमीके॥
नारद जानेउ नाम प्रतापू। जगप्रियहरि, हरिहरप्रियआपू।
भरत सरिस को राम सनेही। जग जपु राम रामु जपु जेही॥
जीह नाम जप लोचन नीरू। पुलकगात हिय सिय रघुबीरू॥
जबहिं रामकहिलेहिंउसासा। उमँगत प्रेम मनहुंचहुं पासा॥
शुकसनकादिसिद्धमुनियोगी। नाम प्रसाद ब्रह्म सुखभोगी॥
उलटा नाम जपत जग जाना। बालमीकि भे ब्रह्म समाना॥
ध्रुवसगलानि जपेउ हरिनामू। पायेउ अचल अनूपमठामू॥
सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने वश करि राखेउ रामू॥

(क०) रतन अपार क्षीरसागर उधार किये
लिये हित चायकै बनाइ माला करी
है। सब सुख साज रघुनाथ महा-

राज जू के भक्त सो विभीषण जू आनि भेंट धरी है॥ सभाही की चाह अवगाह हनुमान गरे डारि दई सुधि भई मति अरबरी है। नाम बिन काम कौन फोरि मणि दीनो डारि खोलि त्वचा रामही दिखायो बुद्धि हरी है॥ [श्रीभक्तमाल]

जगतपिता की माता श्रीकौशल्या जी—

"राम गवन सांचो किधौं सपनो मन परतीत न आवै। लगेइ रहत मेरे नयनन आगे राम लषन अरु सीता। तदपि न मिटत दाह या उर को विधि जो भयो विपरीता॥ दुख न रहै रघुपतिहि विलोकत तनु न रहै बिनु देखे। करत न प्राण पयान सुनहु सखि! अरुझिपरी यहि लेखे"

जगज्जननी के जनक श्रीजनक जी—

"प्रण कीन मोहिं न विशेष चिन्ता सीताहु की लुनिहै पै सोई सोई जोई जेहि बई है। रहे रघुनाथ की निकाई नीकी

नीकी नाथ हाथ सो तिहारे करतूति जाकी नई है"॥ (गीतावली)

(चौ०) इनहिं बिलोकत अति अनुरागा।
बरबस ब्रह्म सुखहि मन त्यागा॥

(श्लो०) कर्मणैवहिसंसिद्धिमास्थिताजनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापिसंपश्यन्कर्त्तुमर्हसि [गी० ३-२०]
विहायकामान्यःसर्वान्पुमांश्चरतिनिःस्पृहः। निर्म मोनिरहंकारःसशान्तिमधिगच्छति [गी० २-७१]
यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन।
कर्मेन्द्रियैःकर्मयोगमसक्तःसविशिष्यते [गी० ३-७]
यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदामुक्तएवसः [५-२८]
प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
मनःसंयम्य मच्चित्तो युक्तआसीतमत्परः [६-१४]
यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति। तस्या हं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति [६-३०]
संतुष्टः सततं योगी यतात्मादृढनिश्चयः। मय्यर्पि तमनोबुद्धिर्यो मे भक्तः स मे प्रियः [१२-१४]

भक्तमणि श्रीप्रह्लाद जी — "मो में, तो में, खड्ग में खम्भ में,"

(सवय्या) आरत पाल कृपाल जो राम जो

ही "सुमिरे" तेहि को तहँ ठाढ़े; नाम प्रताप महा महिमा अंकरे किये खोटेउ छोटेउ बाढ़े। "जापक" एक ते एक अनेक भये तुलसी तिहुं ताप न डाढ़े; प्रेम बदौं प्रह्लाद हि को जिन पाहन ते परमेश्वर काढ़े ॥

सदेह भीति साक्षात् अनुरक्ति, बरन परा प्रेमा भक्ति के भी प्राणों की आत्मा, परम कल्याणी' श्रीमिथिलायुवतियों तथा श्रीव्रजगोपियों के अनिर्वचनीय विलक्षण सुरति चिन्तवन और मनन पर, श्री कृपा से, ध्यान देना युक्ततम है ॥

(श्लोक) यत्ते सुजातचरणाम्बुरुहं स्तनेषु
भीताः शनैः प्रिय दधीमहि कर्कशेषु।
तेनाटवीमटसि तद्व्यथते न किंस्वित्
कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदायुषांनः (श्रीमद्भागवत)
हरिरिति हरिरिति जपतिसकामं (श्रीजयदेवगीतगो०)

(दो०) नीलमनी घन नील लखि, राम नाम सुनि कूक।
राम चरण सुधि राम की, होत हृदय दू टूक ॥
श्रीसरयू, श्रीरत्नगिरि, विपिन प्रमोद, वसन्त।
सुनि चातक पिक कूक, हिय, फाटत बिनु, सिय कन्त ॥

(रूपकला)

वात्सल्य रस के वा सख्यरस के श्रेष्ठ विशिष्ट; दास्य निष्ठावाले महाभाग्य-भाजन; शान्तरस के पूरे; उज्ज्वल शृङ्गाररस की पगी हुई रसीली चमत्कारशालिनी; महाकल्मष के नरक में धसजानेवाले; जिन पुण्यात्माओं के धर्म और कीर्त्ति की ध्वजा स्वर्ग में फहराती हो; विचित्र सुमन्दिर प्रासाद के बसने वाले; सर्व सम्पत्ति सम्पन्न श्रीलक्ष्मीकृपापात्र; "मैं मोर हम हमार" से निवृत्त होके एकान्त नदी तट केवल वृक्ष तले रहने वाले विरक्त; श्री अर्चावतारअर्चक दर्शनानन्दी, ध्यान-जनित सुख से शीतल प्रफुल्लित प्रहृष्ट; प्रियतम के विप्रयोग के विरह दुःख से अतिशय व्यथित परिदीन विचूर्ण संतप्त और तेजपुंज; चाहे जिस संप्रदाय में हों; कोई हों; किसी व्यवस्था में हों; किसी कोटि में हों; जोहों; "नाम" तो सबों ही का आधार है॥

श्री ६ गोस्वामी जी के सिद्धान्त—

१ "काय मन वचन सुभाय तुलसी है जाहि रामनामकौ भरोसो ताहीकौ भरोसो है॥"

२ (क०) राम नाम मातु पितु, स्वामी समरत्थ हितु, आस राम नाम की, भरोसो राम नाम को; प्रेम राम नाम ही सों, नेम राम नाम ही को, जानौं न मरम पथ दाहिनो न बाम को। स्वारथ सकल परमारथ को "राम नाम," राम नाम हीन तुलसी न काहू काम को; राम को शपथ सरबस मेरो राम नाम, कामधेनु काम तरु मोसे छीन छाम को॥

३ (दो०) तुलसी जाके मुख कभूं, धोखेउ निकसै "राम"। ताके पग की पानही, मेरो तनु को चाम॥

रे मन! अभ्यास भी प्रकृति और स्वभावही हो जाता है; तस्मात् परमसार का अभ्यास कर श्री नामदेव जी, श्री कबीर जी, पद्मनाभ जी, गणिका, श्रीध्रुव, श्रीप्रह्लाद, श्रीविभीषण, श्री द्रौपदी जी, श्री गजेन्द्र, प्रभृति की कथा सदैव सुनना चाहिये॥

ऐसे ऐसे उदाहरण अनेक हैं कि जपने की कौन कहे, शीश पर "रामनामा वस्त्र" मात्र शरीर छूटने के समय बँधे रहने ही से महापातकी तर जाते हैं ॥

रे मन! श्रीमद्भागवत और पुराणों में तथा श्री भक्तमाल और रणबीर भक्तिरत्नाकर इत्यादिक सद्ग्रन्थों में भगवन्नामों के माहात्म्य के सहस्रशः आख्यान और अद्भुत दृष्टान्त, भरे हैं ॥

किं बहुना, श्रीमुख वचन भली भांति मनस्थ चाहिये ॥

"सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते। अभयं सर्व भूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतं मम" (श्रीमुख वचन)

"सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहं त्वां सर्व-पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच" (१८-६६)

(चौ०) सुमिरिय रामहि गाइय रामहि।
सन्तत सुनिय रामगुण ग्रामहि ॥

सीताराम शरण अधमाधम। जन भगवान प्रसाद पतिततम ॥
सुर द्विज सन्त निहोरि निहोरी। मांगै रामभक्ति कर जोरी ॥

॥ श्रीसीतारामचन्द्राभ्यान्नमः ॥

[अथ युगलनाम मंजरी]

(रोलाछन्द) जयति विमल विज्ञान वपुष विज्ञान निधाना । जयति तुरीया जय तुरीय, पर परा प्रधाना ॥ १ ॥ जय जगदीशा जगदधीश, जनु पुरुष प्रकृति तनु । जयति जगत कारण निमित्त युग जनक जननि जनु ॥ २ ॥ जय वामांगी; दक्षिणांग आसीन अभंगा । जय गौरांगी श्यामलांग छवि यमुना गंगा ॥ ३ ॥ जय विधि वन्दित चरण, जयति विधि युवति वन्दिता । जयति अनिन्दित सुयश, जयति कीरति अनिन्दिता ॥ ४ ॥ नमो अमित अवतार निजेच्छित, जनहितकारी । परा-शक्ति प्रणमामि जाहि गहि बहु वपु-धारी ॥ ५ ॥ नमो अमित अवतार शिरोमणि, सिया विहारी । शक्ति सहित अवधेश जनक कृत जनक सुखारी ॥ ६ ॥ नमो नमो

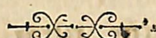
शिशु चरित सहानुज करण कृपाला। नमो भगिनि युत बाल केलि अनुसरनिदयाला ॥७॥ नमो विवाह विनोद विधायक सिय रघु-नायक। चित्रकूट वन केलि करण, सुर मुनि सुखदायक ॥ ८ ॥ जयति युगल करुणा निधान, नरलीलाकारी। सहि दुख दुष्टन नाश करन, भक्तन भयहारी ॥ ९ ॥ जय सिय रघुवर लषन सतियकपि जान विराजी। अवधागत पुर जन जननी भरतादि नि-वाजी ॥ १० ॥ जय विजयी राजाधिराज, सीतापति स्वामी। जय युग सीताराम शरण जन मन विश्रामी ॥ ११ ॥ जय श्री सीता प्राणनाथ, श्रीराम पियारी। जय रघुराज जीवनी जानकि जीवन भारी ॥ १२॥ जय जानकी निवास, जयति रघुराज निवासा। जय सीता सुखरास, जयति रघुवर सुखरासा ॥ १३ ॥ जय जय जय श्री रामवल्लभा, जय सियवल्लभ। जयति राम रसिका अयोनिजा नायक सुल्लभ ॥ १४ ॥ जय-

ति राम रमणी, विदेहजारमण रसीले। जय रघुवर भामिनी, भूमिजा रसिक सुशीले॥१५॥ जय जय श्रीरघुवीर मोहिनी, महिजा मोहन। जय रघुवर प्रियतमा, जयति सिय प्रियतम सोहन॥१६॥ जय जय सीता-राम, जानकी राघव जय जय। जय मैथिलि रघुनाथ, श्याम श्यामा शोभा-मय॥१७॥ जय श्रीरघुकुलकेतु, जयति निमिवंश पताका। दशरथ जलनिधि चन्द्र जनक वारिधि विधु राका॥१८॥ नौमि दिव्य दामिनि सुदेह मिलि थिर घनश्यामा। संयुत छवि शृङ्गार रसाधिप सरिस ल-लामा॥१९॥ नमो सुपट परिधान पीत श्यामल अभिरामा। भूषण मणि रसराम जटित मोहन रतिकामा॥२०॥ जय सीर-ध्वज सुयश ध्वजा, दशरथ यश ध्वजवर। जयति सुनयना कीर्तिकरा, जय कौशला कीर्तिकर॥२१॥ जयति सख्य रस रूप, जयति रस सखी स्वरूपा। जयति भक्त

वत्सल अनूप, वत्सला अनूपा ॥२२॥ जयति भरत शत्रुघ्न भ्रात लक्ष्मण सुखदाता । जय माण्डवि श्रुतिकीर्त्ति भगिनि उर्मिला सुख्याता ॥ २३ ॥ जय कांचन वन केलिरतो, जय वन प्रमोद रुचि । जय सरयू जल पान निरत, प्रिय कमला जल शुचि ॥ २४ ॥ जय जानकी अनन्य, जयति रति रामानन्या । जय निज पतीव्रत सुधन्य, पातिव्रत धन्या ॥ २५ ॥ जय सीता शुचि गिरा अर्थ जल बीच राम जय । जय दम्पति युगनाम रूप समझे एकहि मय ॥ २६ ॥ जय जय सरयू, अवध, अवधवासी सब जीवा । जय जय श्री गुरु, सन्त रामरत प्रद सुख सीवा ॥ २७ ॥ इति "श्रीसीताराम नाम मंजरी" ललामा । विरचित जन रस राम मणी माला अभिरामा ॥ २८ ॥ रसिक सुजन गल धारि, लहैं सुषमा सुखधामा । सम माधुर्य्य परत्वनाम, युत "जयति, प्रणामा" ॥ २९ ॥ दुखहर सुखकर पढ़त

"नाममंजरी" सनेमा । सुनत सुमति गति देनि भक्ति सीतापति प्रेमा ॥ ३० ॥*

श्रीसीताराम शरण रसराम (रसरंग) मणि



अखण्डैक नित्यकिशोर मूर्त्ति शोभाधाम राजीवलोचन कृपासिन्धु श्रीजानकी जीवन जी की जय ।

ॐ नमो भगवते हनुमते श्रीरामदूताय ।

जै राम रूपराशि कृपासिन्धु सुखसदन ।
सीता नयन चकोर शरदपूर विधुवदन ॥
राजीव नैननील सरोरुह तमाल तन ।
लावण्यता विलोकि लाजित कोटि शत मदन ॥
राघव विपिन प्रमोद विहारी रमारमन ।
गौरीशप्रिय विरञ्चि अमरसेव्य श्यामघन ॥
मुनि सन्त विप्र धेनु धरा देव दुख दमन ।
दशशीशरिपु खरारि प्रणत आपदा दलन ॥

* "युगलनाममंजरी" अर्थात् श्रीसीतारामनाम मंजरी के १२ छन्द तो ग्रन्थ के आदि में (द्वितीय और तृतीय पृष्ठ में) लिख आये हैं और (तेरहवें से बयालीसवें पर्यन्त) तीस छन्द इस नामप्रकरण के अन्त में यहां लिखगये ॥

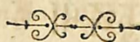
सौमित्रि बन्धु परम मनोहर नलिननयन।
सौन्दर्य्यखानि मूरतिमाधुर्य्य छवि अयन॥
प्रणताश्रितापदा हर कलिकाल मल दहन।
करुणाकरण अकारण प्रपन्न गुण गहन॥
केवल कृपा तुम्हारि है कामादि भय शमन।
बिनुतवकृपाकहां सुख करि कोटिशत यतन॥
हिय हेरि नाथ! एक तुम्हीं सर्व भय हरन।
सीता सेवरे आयउ प्रभु पद्म पद शरन॥
(श्रीसीतारामचन्द्रप्रसाद जी)

जै अशरन शरन राम दशरथ किशोर।
जनकनन्दिनी मुख विधूवर चकोर॥
अवधनाथ श्रीनाथ मम प्राणनाथ।
लषण मारुती नाथ शर चाप हाथ॥
प्रभो जानकी प्राणवल्लभ हरी।
कृपासिन्धु भगवन्त रावण अरी॥
मुनीजन अगमकृत सखा भालु कीश।
निजेच्छा विहारी रमा स्वामिनीश॥
विबुध वृन्द सुखदायि दूषन दमन।
मही देव गो देव महि दुख शमन॥

उमानाथ ब्रह्मादि सेवित उदार।
उरे द्विज चरण चिह्न प्रभुता अपार॥
त्रिविध तापहर कारुणिक अघ हरन।
विना हेतु हितकारि मङ्गल करन॥
विभो व्यापकानन्त विज्ञान भूप।
अयोध्याविहारी द्विभुज दिव्य रूप॥
अलख सच्चिदानन्द छवि मूर्त्तिमान।
पतितपावन अव्यक्त करुणा निधान॥
तुम्हीं में मही स्वर्ग सातौ पताल।
नहीं शून्य तुम से कोई देश काल॥
तुम्हीं सब में हौ औ तुम्हीं में हैं सब।
रहे आपै, प्यारे! न था कुछ भी जब॥
सकलही पदारथ भरे हैं यहीं।
पै तुम तज तो कुछभी है अपना नहीं॥
मैं दिन रात देखूंहूं लीला तेरी।
है चक्कर में हे प्यारे! बुद्धी मेरी॥
अगम औ अकथनीय महिमा तेरी।
है अति क्षुद्र बुधि अल्पतर मति मेरी॥
न देखी किसू ने गिरा थाह लेति।

कहा शेष औ वेदों ने "नेति नेति"॥
बड़े से बड़े भी सके कर न जो।
प्रभु स्तुति तेरी मुझ से किस भांति हो॥
तेरे पद्म पद छुट नहीं और ठौर।
न तव प्रेम तजि जगमें कुछ सार और॥
मैं कलिमलग्रसित अतिविकल पाहिपाहि।
तेरी माया गाढ़ी प्रबल त्राहि त्राहि॥
अधिक इससे क्या कह सके राम हित।
अमितहौ अमितहौ अमितहौ अमित॥
कृपा करके दो प्रेम अपना विभो।
सियाराम सियराम जपना प्रभो!

[पण्डित श्रीरामहितोपाध्यायजी]



श्रीसीतारामार्पणम्॥ इति शुभम्॥



नमोनमोब्राह्मणेभ्यश्च वैष्णवेभ्योनमोनमः ॥

☞ जिस बात का प्रमाण [१] श्रीवाल्मीकीयरामायण [२] श्रीमनुस्मृति [३] पुराणरत्न नाम पाराशरीय श्रीविष्णुपुराण, और [४] महाभारत, इन चारों में से किसी में भी मिले तो निःसन्देह और बीस बिस्वे निश्चय जानना कि यह ठीक वेद अनुरूप बात है, और जो चारों की संमति हो तो फिर क्या कहना; तथा, जिस बात का विरोध इनमें से किसी में पाया जावै तो दृढ़ विश्वास करना कि अवश्यही कहीं न कहीं वेद में भी उसके प्रतिकूल और विरुद्ध ही है ॥ यह अपूर्व हथकण्डा, जिसे कभी न भूलना चाहिये, केवल अन्य वार्त्ताओं के विषय में निवेदन किया, परन्तु [१] श्रीसीताराम नाम के प्रताप की बड़ाई [२] तथा अपनी इन्द्रियों के वश में पड़ने की बुराई, इन दोनों बातों के प्रमाण की तो चर्चाही क्या ॥

यह सिद्धांत और ध्रुव है कि जो जिस को सुमिरता जपता रहता है, अन्त को वह उसी के पास पहुँचता और उसी की समता वा प्रसन्नता को प्राप्त होता है; किसी विधि से अन्यत्र नहीं जा सकता तथा उसके समीप पहुँचे बिन कदापि नहीं रह सकता ॥

(श्लो०) यं यं वापि स्मरन् भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् । तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भाव भावितः ॥ [भ० गी० ८-६]

(चौ०) जेहि चाहै जो सो तस होई।
मोर अनन्य मोहिं प्रिय सोई ॥

तस्मात् भागवत लक्षणों की उपलब्धि और भगवत् की प्राप्ति की चाह वालों को भगवतही के नामों का स्मरण जाप योग्य है और स्वयं हरि के ही श्रीमुख वचनों को, चाहे हरिजनों के ही भाष्यों और संहिताओं को पढ़ देखिये अथवा वेदान्तों में सुनाकीजे ॥ "सब तज, हरि भज"

(श०) तेंतिस कोटि भजे संसार।
खोटा बन्दा खोटी नार॥
खाविन्दों का खाविन्द एक।
तिसको जपे यह कबिरा टेक॥
[श्रीकबीर]

(दो०) देव पितर सब पूजियां, एक न
तुल हरि नाम। कह नानक सु
रे मना! क्यों नहिं सुमिरे राम?॥
[गुरु नानक]

[चौ०] निज सिद्धान्त सुनावौं तोहीं।
सुनि उर धरि सब तजि भजु मोहीं॥
सबकै ममता ताग बटोरी।
मम पद मनहिं बांध बटि डोरी॥
[श्रीमुख]

[श्लो०] कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यंतेऽन्य-
देवताः। तं तं नियममास्थाय प्रकृ-
त्या नियताः स्वया [भ०गी०७-२०]
अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम्।
देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति
मामपि॥ [भ०गी०७-२३]

अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च।
न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्य
वंति ते॥ [भ० गी० ९-२४]

यान्ति देवव्रता देवान् पितॄन्यान्ति
पितृव्रताः। भूतानि यान्ति भूतेज्या
यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्॥

[भ० गी० ९-२५]

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रव-
र्त्तते। इति मत्वा भजन्ते मां बुधा
भावसमन्विताः [भ०गी० १०-८]

यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषो-
त्तमम्। स सर्वविद्भजति मां सर्व-
भावेन भारत॥ [भ०गी०१५-१६]

[दो०] पात पात को सींचबो, बरी बरी
को लोन। तुलसी खोटे चतुरपन
कलि डहके को कौन॥

(दो०) गङ्गा यमुना सरस्वती, सात सिन्धु
भरपूर। तुलसी चातक के मते विना
स्वाति सब धूर॥ [श्री ६ गो०]

(वि०प०) विश्वास एक राम नाम को। मानत नहीं प्रतीति अनत, ऐसोइ सुभाव मन वाम को॥ पढ़िबो पर्‍यो न छठी छमत "ऋग, यजुर, अथर्वण, साम" को। व्रत तीरथ तप सुनि सहमत पचि, मरै करै तन क्षाम को?॥ कर्म जाल कलि काल कठिन आधीन सुसाधित दाम को। ज्ञान विराग योग जप तप भय लोभ मोह कोह काम को॥ सब दिन सब लायक भव गायक रघुनायक गुण ग्राम को। बैठे "नाम" कामतरु तर, डर कौन घोर घन घाम को॥ को जानै "को जैहै यमपुर, को सुरपुर, परधाम को?"। सुमिरत भजत यहीं भल लागत तुलसी रामगुलाम को॥

(दो०) एकै साधे सब सधे, सब साधे सब जाय। जो गहि सेवै मूल को, फूलै फलै अघाय॥ [श्री ६ गोस्वामी]

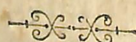
(श्लो०) सांकेत्यं पारिहास्यं वा स्तोभं हेलन·

मेव वा । वैकुण्ठनामग्रहणमशेषा-
घहरं विदुः ॥ [श्रीमद्भागवत]

(श्रीगीतावली) प्रीति को, प्रतीति को, सुमिरिबे को, सेइबे को, शरण को, समरथ, तुलसी हु ताके हैं ॥

जो कुछ इतने अनेक पत्रों में फैला, सो सम्पूर्ण आशय थोड़ेही से शब्दों में भी पूरा पूरा कहा जाना सम्भव था; परन्तु अतीव संक्षिप्त में गुप्त गुण के अतिरिक्त कुछ दोष भी हैं कि नहीं, विशेषतः ऐसे देश काल में, सो स्वयं आप विचार ले सकते हैं ॥ विस्मृति और पुनरुक्ति आदि की क्षमा के लिये भी आपके हृदयकमल में अवकाश हो सकता है श्रीसीताराम नाम के प्रसंग और आश्रय से ही ॥

(चौ०) कवि न होउँ नहिं चतुर कहावौं।
जस तस रामनाम यश गावौं ॥



कसहू कु
लखिकै
गालगूल कविता
संत त्यों पिता समान बाल
"निज निज कविता के गुमान ते
बहु ग्रन्थ बनावैं। बिनु हरि कृपा साधु
नहिं गावैं यद्यपि बहुत चलावैं॥

[श्रीरामनाथ प्रधान]



[दो०] जयति जगत पावन करन, राम वर्ण
वर दोय। जेहि लहि पुनि कछु
लहन की, आश न चित में होय॥

[श्रीहरिश्चन्द्र प्रेमी]

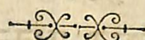
श्रीसीताराम नाम के प्रेमी और नेमी
महात्माओं की जय; भगवन्नाम के कीर्त्त

मेव वा । वैकुण्ठनामग्रहणमशेषा-
घहरं विदुः ॥ [श्रीमद्भागवत]

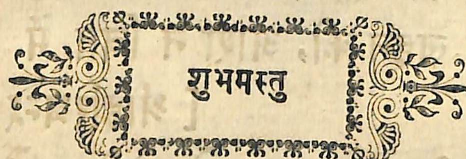
(श्रीगीतावली) प्रीति को, प्रतीति को, सुमिरिबे को, सेइबे को, शरण को, समरथ, तुलसी हु ताके हैं ॥ [...माज]

जो कुछ इतने अनेक पत्रों ... कलिमल-
सो सम्पूर्ण आशय ... पाथेयं यन्मुमु-
भी पूरा ... परपदप्राप्तये प्रस्थितस्य ।
...नामस्थानमेकं कविवरवचसां, जीवनं सज्जनानां; बीजं धर्मद्रुमस्य, प्रभवतु भवतां भूतये रामनाम ॥

[भगवान् श्रीअंजनीनन्दन]



श्रीअयोध्या, सीतारामशरण भगवान्प्रसाद



ति " भागवत गुटका" पूर्वार्द्ध अर्थात् "श्रीनामकीर्त्तन"
नाम प्रथम प्रकरण समाप्त ॥